नागरिक मार्गदर्शिका शृंखला-२

नव लोकप्रबंधन

सुशासन के विचार और व्यवहार

संपादक:
पार्थ जे शाह
संजय कुमार साह

सेंटर फॉर सिविल सोसाइटी

नागरिक मार्गदर्शिका श्रृंखला-2

नव लोकप्रबंधन

सुशासन के विचार और व्यवहार

संपादक :
पार्थ जे शाह
संजय कुमार साह

सेंटर फॉर सिविल सोसाइटी

सेंटर फॉर सिविल सोसाइटी सीमित सरकार, कानून का शासन और प्रतिस्पर्धी बाजार के संदर्भ में सार्वजनिक नीतियों पर चिंतन करने वाला एक वैचारिक संगठन है।

के-36, हौज खास एनक्लेव,
नई दिल्ली 110016.
दूरभाष: 26537456, 26521882, फैक्स: 26512347
ईमेल: ccs@ccsindia.org वेब: www.ccsindia.org

आभार

आज शासन व्यवस्था में मौजूद भ्रष्टाचार, लालफीताशाही, भाई-भतीजावाद, अकर्मण्यता, लेट-लतीफी, फिजूलखर्ची इत्यादि अनेक खामियों के लिए बहुधा आम आदमी के ईमान को कटघरे में खड़ा कर दिया जाता है। पर अनेक शोध बताते हैं कि दोष नागरिकों में नहीं वरन् व्यवस्था में ही है। इस व्यवस्था में उपर्युक्त दोषों के पनपने के अनेक कारण मौजूद हैं। इन कारणों को पुस्तक में स्पष्ट किया गया है।

आज देश को विकास की पटरी पर आगे बढ़ाने के लिए एक ऐसी शासन पद्धति की जरूरत है, जो उपर्युक्त दोषों से मुक्त हो। इसके लिए नव लोकप्रबंधन एक सही विकल्प प्रस्तुत करता है।

चूंकि आज आम जनता ही सरकार चुनती है, अत: शासन संबंधी मुद्दों और विभिन्न विचारों से उनका अवगत होना जरूरी है। बेहतर लोकप्रशासन का विकल्प देने वाले नव लोकप्रबंधन के सिद्धांत को आम लोगों तक पहुंचाने के उद्देश्य से ही हिंदी में इस पुस्तक को तैयार करने का निर्णय लिया गया। इस पुस्तक में प्रस्तुत विचार और आंकड़े सेंटर फॉर सिविल सोसाइटी, नई दिल्ली द्वारा ही प्रकाशित एक अन्य अंग्रेजी पुस्तक "स्टेट ऑफ गवर्नेंस: दिल्ली सिटीजन हैंडबुक" से लिए गए हैं।

श्री देवेंद्र कुमार देवेश, उपसंपादक, साहित्य अकादमी; श्री कौशल किशोर, असिस्टेंट प्रोफेसर, जे आर एच यूनिवर्सिटी, चित्रकूट और सुश्री प्रियंका चौहान, भारतीय लोक सेवक (IAS) ने पुस्तक का सूक्ष्म निरीक्षण

किया है और अनेक सुझावों से इसे समृद्ध किया है। हम तहेदिल से उनके आभारी हैं।

हम जॉन टेंपल्टन फाउंडेशन के प्रति भी आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने पुस्तक के प्रकाशन हेतु फंड उपलब्ध कराया है।

नवीन मांडवा, विदिशा मैत्रा, अनुप्रिया सिंघल, श्रुतिजित के के, माइकेल स्टैमिंगर, नूपुर अग्रवाल, ज्योत्स्ना सिंह, सौम्या गुप्ता, देविका जोहरी, नेहा श्वेतांबरी, नेहा शर्मा और गौरव तिवारी ने विभिन्न विषयों पर गहराई से शोध कर आंकड़ों का संकलन और विश्लेषण कर उसे अलग-अलग अध्यायों में प्रस्तुत किया है। उनका योगदान वाकई काबिले तारीफ है।

पुस्तक में अर्थशास्त्र के कई जटिल शब्दों को यथासंभव सरल रूप में रखने का प्रयास किया गया है। फिर भी आपके सुझाव पुस्तक की गुणवत्ता में अनवरत सुधार करते रहने में हमारी मदद करेंगे।

7 जून, 2005
पार्थ जे शाह
संजय कुमार साह

अनुक्रम

अध्याय	**पृष्ठ सं.**
1. कुछ वास्तविकताएं	3
2. भूमिका	4
3. सूचना का अधिकार अधिनियम: *'सूचना का अधिकार' से 'सूचना प्रकाशन का कर्त्तव्य' की ओर*	13
4. शिक्षा: *पैसा छात्रों को दें, विद्यालयों को नहीं*	16
5. पर्यावरण: *समुदाय और बाजार प्रबंधन की ओर*	22
6. स्वास्थ्य: *कठोर जवाबदेही, अपकृत्य और 'झोला-छाप चिकित्सकों' को वैधानिकता*	24
7. विद्युत: *निजीकरण से प्रतिस्पर्धा की ओर*	27
8. परिवहन: *कानूनों से मुक्ति तथा पड़ाव अधिकार*	29
9. समाज कल्याण विभाग: *आओ बीपीएल, जाओ एपीएल*	32
10. खाद्य और नागरिक आपूर्ति विभाग: *राशन से 'खाद्य-पर्चा' की ओर*	35
11. कृषि विपणन बोर्ड: *लाइसेंस और एकाधिकार का खात्मा*	37

1. कुछ वास्तविकताएँ

1- भोज्य पदार्थों की डेढ़ लाख पंजीकृत दुकानों का निरीक्षण करने के लिए खाद्य अपमिश्रण निवारण विभाग के पास केवल अट्ठाइस निरीक्षक हैं। अगर एक निरीक्षक हर दिन एक दुकान का निरीक्षण करे, तो एक दुकान का निरीक्षण सत्रह सालों में एक बार किया जा सकेगा। सन् 1960 से निरीक्षकों की संख्या में कोई वृद्धि नहीं की गई है।

2- सोशियल जूरिस्ट द्वारा किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि दिल्ली नगर निगम के विद्यालयों से पाँचवीं कक्षा तक पढ़े अस्सी प्रतिशत बच्चे अपना नाम पढ़ना-लिखना भी नहीं जानते हैं।

3- दिल्ली परिवहन निगम प्रत्येक बस पर बारह लोगों को नियुक्त करती है और हर माह पूरे पचीस करोड़ रुपयों का नुकसान उठाती है, जबकि निजी संचालक प्रत्येक बस पर छह लोगों को लगाते हैं और खूब लाभ कमाते हैं।

4- किसान थोक बाजार में बिक्री का सात से पंद्रह प्रतिशत कमीशन एजेंट को देते हैं। और ऐसा दिल्ली कृषि विपणन बोर्ड के थोक बाजार पर एकाधिकार के कारण है।

5- दिल्ली में प्रति दस हजार लोगों पर छत्तीस सफाईकर्मी कार्यरत हैं, जबकि अन्य महानगरों में यह संख्या अठारह से बीस तक है।

6- 'वृद्धावस्था पेंशन योजना' में चार करोड़ से अधिक रुपये बर्बाद हो गए, क्योंकि साढ़े सैंतीस प्रतिशत लाभार्थी फर्जी थे। 168 मामलों में लाभार्थियों की मृत्यु होने एवं स्थानीय डाकघरों द्वारा इसकी सूचना देने के बावजूद समाज कल्याण विभाग उनके नाम पेंशन की राशि भेजता रहा।

7- श्रम विभाग द्वारा औद्योगिक मजदूरों के लिए संचालित 'होलीडे होम्स' में सन् 2000-01 में प्रति आगंतुक 1545 रुपये (मसूरी) तथा 2612 रुपये (हरिद्वार) की सब्सिडी दी जा रही थी।

8- 'औषधि नियंत्रण विभाग' में पाँच हजार से अधिक दवा विक्रेताओं के लिए केवल उनतीस दवा निरीक्षक हैं। एक अनुमान के मुताबिक नकली दवाओं का सालाना कारोबार लगभग चार हजार करोड़ रुपये का है।

9- नियंत्रक और महालेखा परीक्षक का निष्कर्ष है कि दिल्ली वित्तीय निगम ने सन् 2002-03 में अपना लाभ कम-से-कम 171.25 लाख रुपये तथा सुरक्षित कोष और अधिशेष 78.99 लाख रुपये बढ़ाकर पेश किए थे।

10- सन् 1999-2000 में विधायक कोष का सिर्फ 3.6 प्रतिशत हिस्सा ही खर्च किया जा सका, जबकि यही खर्च सन् 2002-03 में बढ़ कर 52.2 प्रतिशत हो गया।

2. भूमिका

जनतंत्र को सफल और गतिशील बनाने के लिए जागरूक जनता का होना आवश्यक है। जनतंत्र के स्थायित्व तथा निरंतर विकास के लिए जरूरी है कि उसके अंतर्गत सभी संगठनों तथा उनके कार्य-व्यवहारों में व्यापक सोच-विचार के माध्यम से सुधार कार्य लगातार जारी रखा जाए। इसके लिए नागरिकों, सामाजिक संगठनों तथा सरकारों के निरंतर एवं सामूहिक प्रयासों की जरूरत है।

प्रस्तुत पुस्तक 'नव लोकप्रबंधन: सुशासन के विचार और व्यवहार' में दिल्ली सरकार के कुछ महकमों *(एजेंसियों, परिषदों, निगमों तथा विभागों)* के काम-काज की दोषपूर्ण शैलियों तथा अन्य खामियों को उजागर किया गया है साथ ही एक नये अर्थशास्त्रीय दृष्टिकोण *नव लोकप्रबंधन* का विकल्प रखते हुए प्रशासन में आमूल-चूल सुधार हेतु कुछ सुझाव रखे गए हैं। पुस्तक में दिए गए सभी आंकड़े सेंटर फॉर सिविल सोसाइटी की ही एक अन्य चर्चित पुस्तक 'स्टेट ऑफ गवर्नेंस: दिल्ली सिटीजन हैंडबुक 2003' से लिए गए हैं। आशा है इस पुस्तक से सरकारी कार्यप्रणाली के बारे में नागरिकों की जानकारी बढ़ेगी और दिल्ली ही नहीं, बल्कि केन्द्रीय तथा प्रान्तीय स्तर पर भी प्रशासनिक सुधार का मार्ग प्रशस्त होगा।

शासन के सिद्धांत

शासन के एक दृष्टिकोण के अनुसार, "हम कर के रूप में सभ्यता की कीमत चुकाते हैं"। इसका अर्थ यह है कि जब-तक 'सरकार' कर इकट्ठा

न करे, तब-तक जनकल्याण नहीं हो सकता है। इस राज्य केन्द्रित दृष्टि में सामाजिक विकास का मूल्यांकन इस आधार पर होता है कि 'सरकार' जनकल्याण पर कितना खर्च करती है। सरकार जितना अधिक खर्च करती है, समाज उतना ही अधिक विकासशील लगता है। जबकि सच्चाई ठीक उलटी है "हम कर के रूप में असभ्यता की कीमत चुकाते हैं"। अगर हम अपना, अपने परिवार, समाज तथा पास-पड़ोस के जरूरतमंदों का अधिक खयाल रख सकें, तो सरकार की भूमिका घटायी जा सकती है। जब-जब सरकार कोई नियम बनाती है, कर में वृद्धि करती है अथवा कल्याणकारी योजनाओं की घोषणा करती है, तब-तब वस्तुत: हम स्वशासन में व्यक्ति और समाज की असमर्थता को स्वीकार करते हैं। समाज का वास्तविक विकास तब होता है, जब किसी नेता, सरकारी अधिकारी अथवा पुलिस की भूमिका के बिना ही लोग स्वयं परस्पर सहयोग के बल पर अपनी समस्याओं का समाधान करते हैं।

इसके साथ ही हमें यह भी याद रखना होगा कि आज तक ऐसी कोई सभ्यता नहीं हुई है, जिसकी अपनी कोई सरकार न हो। अत: सरकार की आवश्यकता तो है, परंतु सरकार की भूमिका सिर्फ उन कार्यों तक सीमित होनी चाहिए, जो सिर्फ और सिर्फ सरकार द्वारा ही किए जा सकते हों। आइए हम विचार करें कि सरकार के जिम्मे क्या-क्या कार्य होने चाहिए और उन कार्यों को कैसे किया जाना चाहिए।

नव लोकप्रबंधन (New Public Management)

लोक प्रशासन और व्यावसायिक प्रबंधन के मिश्रण से तैयार 'नव-लोकप्रबंधन' का नवोदित विचार उपर्युक्त प्रश्नों का व्यावहारिक उत्तर देता

है। जन कल्याण की दृष्टि से नगर प्रबंधन अर्थात् स्थानीय सरकार का सबसे अधिक महत्व है। 'नव-लोकप्रबंधन' को अमल में लाकर एक कल्याणकारी नगर प्रशासन का लक्ष्य हासिल किया जा सकता है।

मोटे तौर पर **नव लोकप्रबंधन** के सात सिद्धांत हैं :-

1. सर्वप्रथम, बाधा मत डालिए;
2. प्राथमिक जिम्मेदारी का सिद्धांत;
3. प्रावधान को प्रबंधन से अलग कीजिए;
4. सेवा के लिए शुल्क लिया जाए, कर नहीं;
5. विकल्प और प्रतिस्पर्धा बढ़ाएं;
6. प्रमुख कार्य पर घ्यान दें, शेष कार्य दूसरों को करने दें और
7. प्रत्यक्ष सब्सिडी दी जाए।

1.सर्वप्रथम, बाधा मत डालिए

चिकित्सकों का यह नियम, "सर्वप्रथम, कोई नुकसान मत कीजिए", नगर प्रबंधकों पर भी लागू होता है। औद्योगिक क्षेत्र में हमने जिस लाइसेंस या परमिट राज को खत्म कर दिया है, वह बाकी कई क्षेत्रों में आज भी लागू है। झुग्गी बस्ती में स्कूल खोलने के लिए, ढाबा या हजामत की दुकान खोलने के लिए, आइसक्रीम, पानी, फल अथवा सब्जी बेचने के लिए लाइसेंस जरूरी है। चूँकि लाइसेंस सीमित संख्या में ही दिए जाते हैं, अत: अनेक लोग बिना लाइसेंस के ही कारोबार करते हैं। इससे सरकारी अधिकारियों को उनके शोषण और उत्पीड़न का बहाना मिल जाता है।

सरकार जहाँ एक ओर विभिन्न रोजगार योजनाओं और सब्सिडी योजनाओं पर बेतहाशा पैसे खर्च करती है, वहीं दूसरी ओर लोगों को स्वयं ईमानदारीपूर्वक कमाने से भी रोकती है।1 जबकि सरकारी

योजनाओं के लिए कोष गरीबों से ही जमा होता है। ज्ञात हो कि राष्ट्रीय कोष में प्रत्यक्ष कर की तुलना में परोक्ष कर का अधिक योगदान रहता है। रोजगार और कल्याण कार्यों के नाम पर गरीबों से पैसे लेने की बजाय सरकार को पहले उन्हें स्वयं कमाने की पूरी छूट देनी चाहिए। सर्वप्रथम, कोई नुकसान नहीं कीजिए! कोई विघ्न मत डालिए!

वर्तमान तथा भविष्य में बनने वाले सभी नियमों और कानूनों को 'जीविका स्वतंत्रता जाँच' की कसौटी पर कसना चाहिए। क्या नगर का कोई कानून किसी को कमाने से रोकता है, खास कर न्यूनतम कौशल तथा छोटी रकम से व्यवसाय करने वालों को? अगर हाँ, तो ऐसे कानूनों को बदल डालिए। लाइसेंस तथा अनावश्यक कानूनों को हटाना सरकार का प्रमुख कार्य होना चाहिए।

2. प्राथमिक जिम्मेदारी का सिद्धांत

प्राथमिक जिम्मेदारी के सिद्धांत के मुताबिक सरकार को सिर्फ वही कार्य करने चाहिए, जिन्हें जनता स्वयं नहीं कर सकती है। सरकार के अंतर्गत सबसे पहली जिम्मेदारी स्थानीय सरकार की होनी चाहिए। जिन कार्यों का संपादन स्थानीय सरकारें नहीं कर सकतीं, वे कार्य राज्य सरकारों को दिए जाने चाहिए। सिर्फ बचे हुए क्षेत्र ही केन्द्र सरकार के जिम्मे होने चाहिए। चूंकि प्रशासनिक कार्य के संपादन की प्राथमिक जिम्मेदारी स्थानीय सरकारों की है, अत: राजस्व उगाही का प्राथमिक अधिकार भी उन्हीं का होना चाहिए। स्थानीय सरकारें राज्य सरकारों को यथोचित अनुपात में राजस्व प्रदान करेंगीं, जो आगे केंद्र सरकार को जरूरी संसाधन उपलब्ध कराएंगीं। प्राथमिक जिम्मेदारी के सिद्धांत के मुताबिक

कार्य संपादन और वित्तीय दोनों ही मामलों में केन्द्र सरकार राज्य सरकारों के और राज्य सरकारें स्थानीय सरकारों के अधीन हैं।

3. प्रावधान को प्रबंधन से अलग कीजिए

सरकार को सार्वजनिक कार्यों की व्यवस्था करनी चाहिए अथवा वित्तीय सहायता देनी चाहिए, पर वास्तविक प्रबंधन निजी क्षेत्र के लिए ही छोड़ दिया जाना चाहिए। इस विचारधारा के तहत सरकार और निजी क्षेत्र के उद्यमी मिलजुल कर व्यवस्था की गाड़ी को आगे बढ़ाते हैं। सरकार जहाँ दिशा-निर्देशक अथवा मार्गदर्शक की भूमिका निभाती है, वहीं वास्तविक धरातल पर कार्यों को अंजाम देने का कार्य निजी क्षेत्र के उद्यमी करते हैं। इस व्यवस्था में कार्यों की बारीकियों में उलझने की जगह सरकार का ध्यान इस बात पर केंद्रित रहता है कि उसे हासिल क्या करना है। इस तरह वास्तविक प्रबंधन में लगे बिना ही सरकार नागरिकों को निजी क्षेत्र के उद्यमियों द्वारा हर तरह की सेवा दिला सकती है। अगर सरकार छात्रों को पाठयपुस्तक नि:शुल्क देना चाहती है, तो उसे प्रकाशन कार्य में स्वयं लगने की जरूरत नहीं। वह निजी प्रकाशकों से पुस्तक खरीद कर छात्रों को दे सकती है या बेहतर होगा कि छात्रों को पैसे ही दे दिए जाएं, ताकि वे अपनी जरूरत की किताबें स्वयं खरीद लें।[2]

देश के कई नगरों में कचरा प्रबंधन, गलियों की सफाई और जैव चिकित्सकीय कचरों के निस्तारण के क्षेत्र में प्रावधान को प्रबंधन से अलग करने के विचार पर पहले से अमल हो रहा है। इस पुस्तिका में हमने इस विचार को प्राथमिक शिक्षा, खाद्य आपूर्ति, नगर परिवहन और गरीबों के लिए जल तथा विद्युत सब्सिडी के प्रावधान पर भी लागू किया

है। सभी गरीब बच्चों को 'शिक्षा पर्चा' (Education Voucher) दिया जाए, जो इसका उपयोग कर मनपसंद विद्यालय में नामांकन करा सकें। विद्यालय इस पर्चे को सरकार के समक्ष प्रस्तुत कर, उससे धन प्राप्त कर लेगा। इस प्रकार सरकार स्वयं विद्यालय तो नहीं चलाएगी लेकिन जरूरतमंद छात्रों को आर्थिक सहायता देकर पढ़ने में मदद जरूर करेगी। शिक्षा सचिव समय-समय पर विद्यालयों का निरीक्षण कर सकते हैं कि छात्रों को अच्छी शिक्षा मिल रही है अथवा नहीं। इसके साथ ही शिक्षा विभाग के अधिकारियों को श्यामपट्टों, खल्लियों, कुर्सियों, मेजों, विद्यालयों तथा वर्ग-कक्षों के निर्माण के लिए टेंडरों तथा बोलियों के मूल्यांकन और कर्मचारियों की नियुक्ति तथा स्थानांतरण, अनुशासनात्मक कार्रवाई, आदि कार्यों की चिंता से भी मुक्ति मिल जाएगी, जिसमें आज वे अपना अधिकांश समय खर्च करते हैं।

3000 से अधिक 'उचित-दर' दुकानों के संचालन और हर दिन टोटे, भ्रष्टाचार तथा संकटों से जूझने की जगह 'खाद्य पर्चा' (Food Voucher) जारी किया जाना चाहिए, जिसका उपयोग कर व्यक्ति किसी भी दुकान से अथवा सरकार द्वारा चिह्नित दुकानों से खरीदारी कर सकता है। जो लोग कहते हैं कि इस पर्चे का उपयोग कर गरीब अखाद्य चीजें खरीदने लगेंगे, उन्हें समझना चाहिए कि आज भी राशन को पैसों के लिए बेचा जा सकता है।

4. सेवा के लिए शुल्क लिया जाए, कर नहीं

जो वास्तव में सेवा का लाभ उठाते हां, केवल उन्हें ही इसकी कीमत अदा करनी चाहिए। आज पानी की आपूर्ति के लिए केवल जल शुल्क

नहीं वरन् सामान्य कर से प्राप्त राजस्व का ज्यादा इस्तेमाल किया जाता है। जिन किस्मत वालों के घर पानी का नल लग चुका है, वे अपने अधिकार से अधिक पानी का इस्तेमाल करते हैं, लेकिन जिनके घर नल लगा ही नहीं है, उन्हें भी कर रूप में पैसे तो देने ही पड़ते हैं!

सरकार की अधिसंख्य सेवाओं का लाभ वे मध्यम वर्ग उठाते हैं, जिनकी पहुँच उन सेवाओं तक है। पर उन सेवाओं के लिए सरकार के खजाने में पैसे उन अत्यंत गरीब लोगों से भी आते हैं, जिनकी पहुँच उन सेवाओं तक नहीं है। अगर आपको पानी के लिए अलग से शुल्क अदा करना पड़े, तो आप गर्मियों में अपने बागीचे को दिन में तीन बार पानी से नहीं सींचेंगे। लेकिन आज बहुत लोग ऐसा करते हैं, क्योंकि वे चाहे कितना भी पानी खर्च करें, उन्हें कर के रूप में बहुत कम सुनिश्चित राशि ही अदा करनी पड़ती है। अनेक अध्ययनों से पता चलता है कि अमीर नहीं बल्कि गरीब ही सरकारी सुविधाओं के लिए पूरा मूल्य अदा करते हैं। उपभोक्ता शुल्क आवश्यक ही नहीं, बल्कि नैतिक रूप से भी उचित है। जो गरीब लोग सेवाओं का मूल्य अदा नहीं कर सकते, उन्हें आर्थिक सहयोग के लिए प्रत्यक्ष सब्सिडी दी जा सकती है। अगले अध्यायों में इस पर और प्रकाश डाला गया है।

5. विकल्प और प्रतिस्पर्धा बढ़ाएं

उत्पाद और सेवाओं के आधार पर प्रावधान और प्रबंधन को तो कई तरीके से अलग किया जा सकता है, मसलन उपभोक्ता शुल्क लगाकर तथा असमर्थ लोगों को आर्थिक सहायता देकर। पर हमें ऐसे उपाय अपनाने चाहिए, जिससे आपूर्तिकर्ताओं के बीच प्रतिस्पर्धा भी बढ़े और

उपभोक्ता के लिए विकल्पों की संख्या भी बढ़े।

दूसरे राज्य सरकारों की अपेक्षा केरल सरकार सबसे अधिक संख्या में विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति और परिवहन अनुदान प्रदान करती है। छात्रवृत्ति (जो शिक्षा पर्चा के समान ही है) और परिवहन अनुदान दोनों ही छात्रों के सामने चयन के लिए विद्यालयों के अनेक विकल्प उपलब्ध कराते हैं। इससे विद्यालयों के बीच भी छात्रों को आकृष्ट करने तथा अपने पास बरकरार रखने हेतु प्रतिस्पर्धा पैदा होती है। विकल्प की इस प्रचुरता तथा प्रतिस्पर्धा से शिक्षा का स्तर ऊँचा उठता है, जिससे न सिर्फ प्रतिभावान विद्यार्थियों को, बल्कि सभी को फायदा होता है। विकल्प और प्रतिस्पर्धा केरल की शिक्षा पद्धति के आधारभूत स्तंभ हैं।

6. प्रमुख कार्य पर घ्यान दें, शेष कार्य दूसरों को करने दें

एक अस्पताल को अपना ध्यान सर्वोत्तम स्वास्थ्य सेवा पर ही केंद्रित करना चाहिए। सफाई, सुरक्षा, औषधि प्रबंधन, कर्मचारियों के लिए भोजनालय आदि कार्यों की जिम्मेदारी दूसरे लोगों को सौंप देनी चाहिए, जो उन कार्यों पर पूरा ध्यान दे सकें। इसी तरह दूसरे कई क्षेत्रों में भी प्रमुख कार्य और अन्य कार्यों के प्रबंधन को एक-दूसरे से अलग किया जा सकता है।

7. प्रत्यक्ष सब्सिडी दी जाए

मूल्य को प्रभावित किए बिना तथा मितव्ययता की भावना को बरकरार रखते हुए सब्सिडी सीधे जरूरतमन्द लोगों तक पहुंचनी चाहिए। किसानों के लिए बिजली पर दी जा रही सब्सिडी से जहाँ बिजली की कीमत

प्रभावित होती है, वहीं बिजली मोटर से खींच कर निकाले गए पानी का दुरुपयोग भी काफी होता है। पानी के अधिक इस्तेमाल से यहाँ-वहाँ पानी के जमा होने तथा लवणीयता की समस्या पैदा होती है।

बोत्सवाना और न्यूजीलैंड जैसे भिन्न-भिन्न परिस्थितियों वाले देशों में 'नव-लोकप्रबंधन' के विचारों और सिद्धांतों का प्रयोग इस पुस्तिका में प्रस्तावित सुधारों के महत्व को रेखांकित करता है। भारत में भी बंगलोर, अहमदाबाद, सूरत, हैदराबाद आदि कई शहरों में ऐसे अनेक सिद्धांतों को अमल में लाया जा चुका है।

सुधार की संभावनाओं की एक झलक

1. वार्ड स्तरीय नव-लोकप्रबंधन

दिल्ली में विद्युत क्षेत्र का निजीकरण तो हो ही चुका है। जल और अवजल (Sewage) का निजीकरण भी अधिक दूर नहीं है। लेकिन विद्युत क्षेत्र के निजीकरण से क्या मिला? एकाधिकार सरकार के हाथों से फिसलकर निजी क्षेत्र की दो कंपनियों के हाथों में चला गया। न तो आपूर्तिकर्ताओं के बीच कोई प्रतिस्पर्धा पैदा हुई, न ही उपभोक्ताओं के लिए प्रचुर विकल्प उपलब्ध हुए। बेहतर समाधान तो यह होता कि विद्युत बाजार को नगरपालिका, वार्ड अथवा विधानसभा क्षेत्र के स्तर पर बाँट दिया जाता तथा विद्युत उपभोक्ता संगठनों को मौका दिया जाता कि वे किसी भी निजी विद्युत आपूर्तिकर्ता से समझौता करें। स्थान तथा खपत के तरीकों के आधार पर हर वार्ड अथवा विधानसभा क्षेत्र अपने

लिए किसी एक सर्वाधिक अनुकूल निजी संगठन से अपना तालमेल करती।

नगर स्तर की जगह अगर वार्ड अथवा विधानसभा क्षेत्र के स्तर पर निजीकरण किया जाए, तो प्रतिस्पर्धा और विकल्प दोनों का जन्म होगा। इस व्यवस्था में आपूर्ति खराब होने पर एक वार्ड अपने आपूर्तिकर्ता को समझौता रद्द करने की धमकी इस विश्वास से दे सकता है कि उसे कोई और आपूर्तिकर्ता तो मिल ही जाएगा। पर यदि एक नगर में एक या दो ही आपूर्तिकर्ता होंगे, तो उन पर अंकुश रखना कठिन है।

यही सिद्धांत पानी के मामले में भी वार्ड अथवा विधानसभा क्षेत्र के स्तर पर *जल उपभोक्ता संगठनों* के द्वारा लागू किया जा सकता है। अवजल इसी सिक्के का दूसरा पहलू है। इस व्यवस्था से जल उपभोक्ता संगठनों में वर्षा जल संरक्षण के प्रति रुचि जगेगी, क्योंकि इससे उन्हें निजी आपूर्तिकर्ताओं से कम-से-कम मात्रा में जल खरीदना होगा।

वार्ड अथवा विधानसभा क्षेत्र स्तर पर इस प्रकार का प्रबंधन सही मायने में नागरिकों को अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं करने में सक्षम बनाएगा। जो लोग निजी आपूर्तिकर्ताओं से सेवाएं खरीद पाने में समर्थ नहीं हांगे उन्हें सरकार द्वारा आर्थिक सहयोग (प्रत्यक्ष सब्सिडी) दिया जा सकता है। इसे वार्ड स्तरीय संगठनों द्वारा प्रभावी रूप से लागू किया जा सकता है। यहाँ मैं फिर कहना चाहूँगा कि गरीब लोग ही सरकारी सेवाओं के लिए पूरी कीमत अदा कर रहें हैं।

2. कार्यों के आधार पर पुनर्गठन

दिल्ली सरकार की नयी वेबसाइट पर कोई भी व्यक्ति बड़ी सरलता से अपनी जरूरत की हर सूचना हासिल कर सकता है। यह आसानी इसलिए हो सकी है, क्योंकि वेबसाइट को सरकारी महकमों के आधार पर नहीं, बल्कि उनके कार्यों के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। कार्याधारित पुनर्गठन ने जब डिजिटल दुनिया को इतना आसान बना दिया है, तब क्यों न वास्तविक दुनिया को भी इसी प्रकार पुनर्गठित किया जाए?

अपने विस्तृत शोध के आधार पर हमने अपने अध्ययन में शामिल सरकारी महकमों को निम्नलिखित आधार पर पुनर्गठित करने का सुझाव रखा है। कई और भी ऐसे महकमे हैं, जो इसी तरह के कार्य करते हैं, पर वे हमारे अघ्ययन में शामिल नहीं थे। पाठक एक बार हमारे द्वारा प्रस्तुत सुझाव का तार्किक आधार समझ लें, फिर वे स्वयं आवश्यक रद्दोबदल पर विचार कर सकते हैं।

सभी सरकारी महकमों अथवा उनकी कुछ योजनाओं को कार्यों के आधार पर तीन विभागों में पुनर्व्यवस्थित किया जा सकता है:

क) उपभोक्ता सुरक्षा विभाग (Consumer Protection Department)

ख) सहकारी वित्त विभाग (Cooperative Finance Department)

ग) व्यक्ति एवं परिवार कल्याण सेवाएँ (Individual & Family Welfare Services)

क) उपभोक्ता सुरक्षा विभाग

इसमें खाद्य अपमिश्रण निवारण विभाग, औषधि नियंत्रण विभाग, माप एवं तौल विभाग तथा जन वितरण प्रणाली को छोड़कर शेष खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति विभाग को शामिल किया जा सकता है। ये सभी

विभाग उपभोक्ताओं को उनका वह वाजिब हक दिलाने का कार्य करेंगे, जिसके लिए उपभोक्ता कीमत अदा कर रहे हैं, साथ ही खरीदारों तथा विक्रेताओं के बीच सौदे को वाजिब बनाने पर बल देंगे तथा बाजार में विश्वास का माहौल भी बनाएंगे।

चूँकि सरकारी अधिकारियों की जनहित की भावना अथवा **कर्त्तव्यबाध** से व्यवसायियों की मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति का शमन नहीं किया जा सकता है। अत: एक के लालच को दूसरे पक्ष के लालच से ही संतुलित किया जा सकता है। मुनाफाखोर लालची व्यावसायियों के बीच परस्पर खुली प्रतिस्पर्धा में ही उपभोक्ताओं का सर्वाधिक हित सुरक्षित होता है। मुक्त प्रतिस्पर्धा के साथ-साथ प्रभावशाली उपभोक्ता अदालत, कड़ा 'लाइबिलिटी कानून' तथा अपकृत्य प्रणाली (Tort System) भी आवश्यक है। सरकार द्वारा इन व्यवस्थाओं के निर्माण का कार्य भी उतना ही जरूरी है, जितना नये उपभोक्ता सुरक्षा विभाग को सशक्त करना। यह विभाग प्रस्तावित पुनर्गठन के बाद खाली बचे रह गये कर्मचारियों को समायोजित करने में सक्षम होगा।

ख) सहकारी वित्त विभाग

'लघु अथवा मध्यम श्रेणी के उद्यमों तथा तकनीकी प्रशिक्षणों को वित्तीय सहायता देने वाली', 'भूमि तथा औद्योगिक भवन उपलब्ध कराने वाली', 'उपभोग ऋण (कंजंप्शन लोन) देने वाली', इत्यादि सभी योजनाएं इसके अंतर्गत आएंगी। विभाग सभी ऋण संबंधी योजनाओं की देख-रेख करेगा, चाहे वह उत्पादन के लिए हो अथवा उपभोग के लिए। चाहे वह सभी नागरिकों के लिए हो अथवा किसी विशेष जाति या समूह के लिए

हो। इतना ही नहीं दिल्ली में 5,000 से अधिक सहकारी समितियाँ हैं। उद्यम अथवा स्वसहायता के जितने भी रूपों की कल्पना की जा सकती है, उन सभी क्षेत्रों में कम-से-कम एक सहकारी समिति कार्यरत है। विभाग अपनी योजनाओं का प्रबंधन स्वयं न कर के इन सहकारी समितियों के माध्यम से करेगा। वह अनुदान की व्यवस्था करेगा, लेकिन वास्तविक 'भुगतान तथा संग्रह' संबद्ध सहकारी समितियों के माध्यम से ही होगा। अनुदान को सहकारी समिति के कार्य निष्पादन विशेषकर वसूली दर तथा निष्क्रिय परिसंपत्तियों (Non performing assets) पर नियंत्रण के आधार पर जारी रखा जा सकता है। बेहतर कार्य करने वाली सहकारी समितियों को अधिक अनुदान दिया जा सकता है। सहकारी कानून में उपर्युक्त सुधार कर सहकारी समितियों के पंजीयक की असीमित ताकत को कम किया जा सकता है। अधिक आत्मनिर्भर सहकारी समिति अपने सदस्यों के हित में बिना सरकारी अधिकारियों के अनावश्यक हस्तक्षेप के स्वयं अपना प्रबंधन करने में समर्थ होंगी।

ग) व्यक्ति एवं परिवार कल्याण सेवाएँ

इसमें समाज कल्याण विभाग, खाद्य और नागरिक आपूर्ति विभाग[3] की जन वितरण प्रणाली तथा दिल्ली अनु. जाति/ अनु. जन जाति/ अ. पि. व./ अल्पसंख्यक/ विकलांग वित्त और विकास निगम जैसे निगमों द्वारा दिए जाने वाले व्यक्तिगत अनुदान की योजनाएं शामिल की जाएंगी।

आज कल्याण योजनाओं का लाभ बहुत कम लोगों को मिल पा रहा है, क्योंकि अधिकांश लोगों को उनके बारे में पता ही नहीं है अथवा सिर्फ राजनीतिक पहुँच वाले ही इन योजनाओं का लाभ उठा पाते हैं,

क्योंकि आवेदन पत्र सिर्फ स्थानीय विधायकों के पास ही मिलते हैं। व्यक्ति तथा परिवार को सहायता उपलब्ध कराने हेतु बनाई गई योजनाओं को एक ही विभाग में रखने से किसी व्यक्ति के लिए उसके लिए लाभदायक सभी योजनाओं के बारे में जानना आसान हो जाएगा। साथ ही सरकार के लिए भी किसी व्यक्ति को दी गई कुल सहायता का आकलन करना आसान हो जाएगा।

प्रस्तावित पुनर्गठन पहुँच, कार्यक्षमता तथा राजनीतिकरण के कुछ बिंदुओं को ही छूता है। नया विभाग भी लक्षित जनसंख्या के कुछ हिस्से की जरूरतों को ही पूरा कर पाएगा। आज 50,000 बच्चे दिल्ली की सड़कों पर जीवन बसर करते हैं, जिसमें सिर्फ लगभग 3,000 बच्चों को ही कल्याणकारी एजेंसियों से थोड़ी-बहुत सहायता मिल पाती है। निकट भविष्य में ऐसी कोई संभावना नहीं दिखती कि सरकार आवश्यकता के अनुरूप संसाधन जुटा ले।

अत्यधिक सामाजिक सुरक्षा वाले पश्चिमी देशों का अनुभव भी इन सुविचारित कार्यक्रमों के बुरे पहलू की ओर इशारा करता है। पारिवारिक और सामाजिक ताने-बाने में बिखराव, लोगों का स्थायी रूप से अस्थायी सहायता कार्यक्रमों पर निर्भर हो जाना और भीषण महंगाई इन देशों में आम बात है।

वर्तमान नजरिये पर पुनर्विचार करने की तथा यथाशीघ्र कुछ रचनात्मक और प्रभावशाली निदान निकाले जाने की आवश्यकता है। आखिरकार कल्याणकारी योजनाएँ सिर्फ गरीबी तथा मौलिक सुविधाओं की कमी के लक्षणों का ही उपचार करती है, समस्या के कारणों का नहीं। यह सही है कि लक्षणों को मिटाना जरूरी है, लेकिन इससे रोग

जड़ से खत्म नहीं होते। दर्द निवारक भले ही गुर्दे में पथरी से होने वाले दर्द में राहत दे, लेकिन वह गुर्दे से पत्थर नहीं निकाल सकता। गरीबी की समस्या का वास्तविक निदान स्थायी आर्थिक विकास से ही होगा। सभी निषेधात्मक नियम-कानूनों को कड़ाई से 'आजीविका स्वतंत्रता जाँच' (Livelihood Freedom Test) की कसौटी पर कसना होगा।

महाविद्यालय के छात्रों के लिए हम नियमित तौर पर देश भर में विभिन्न स्थानों पर 'स्वतंत्रता और समाज' संगोष्ठी आयोजित करते हैं। संगोष्ठी में हम उनसे यह भी पूछते हैं कि गरीबों की मदद हेतु निम्नलिखित तीन उपायों में से वे किसे प्राथमिकता देना चाहेंगे। 1. कर चुकाइए और सरकार को मदद उपलब्ध कराने दीजिए, 2. अपनी सहायता स्वयं कीजिए तथा 3. स्वयंसेवी संगठनों के जनहित प्रयासों को अनुदान दीजिए।

जब मुद्दे को स्पष्ट किया गया, तो अधिकांश छात्रों ने तीसरे उपाय को प्राथमिकता दी। हालाँकि जब तक हम यह तय न कर लें कि तीसरे उपाय को कैसे क्रियान्वित किया जाए, तब तक हम पहले उपाय के साथ आगे बढ़ सकते हैं, ताकि जरूरतमंद लोगों के बीच समाज सेवा हेतु समर्पित लोगों से मिलने वाले लाभ को सुनिश्चित किया जा सके। हमें जल्दी ही इस पर एक स्पष्ट राय कायम करनी होगी।

और भी कई सुधारात्मक उपाय हो सकते हैं, जिन्हें पूरी सरकार पर लागू किया जा सकता है। अत: उस पर अलग से किसी अध्याय में विचार न कर यहीं उसकी चर्चा की गई है।

3. ठोस बजट प्रबंधन

सरकार द्वारा बजट के निर्माण में अभी भी गोपनीयता बरती जाती है, जबकि यह शासन का सबसे महत्तवपूर्ण दस्तावेज है। बजट निर्माण की प्रक्रिया को सार्वजनिक किया जाना चाहिए और उस पर देशव्यापी बहस करायी जानी चाहिए। बजट से संबधित संर्पूण दस्तावेज के साथ ही अलग-अलग विभागों के बजट संबंधी सभी दस्तावेजों को भी सर्वसुलभ कराया जाना चाहिए। कम-से-कम उन्हें सरकारी वेबसाइट पर तो रखना ही चाहिए। सभी सूचनाओं को जनसुलभ बनाना ई-प्रशासन की एक अनिवार्य शर्त है।

सूचना का अधिकार अधिनियम नागरिकों को आवश्यक सूचना हासिल करने का अधिकार देता है। अगर सरकार अपना कर्तव्य समझते हुए स्वयं सभी सूचनाओं (कानूनी रूप से गोपनीय सूचनाओं को छोड़ कर) को प्रकाशित करे, तो यह बेहतर ही नहीं किफायती भी होगा। यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जा चुका है कि कार्य के परिणाम को ध्यान में रखते हुए शून्य आधारित बजट बनाने (Zero-based budgeting) से सरकारी खर्च के प्रभाव व पारदर्शिता में काफी सुधार हो सकता है। लेखा प्रणाली का आधार मूल्य का भुगतान (Cash basis) न होकर वास्तविक विनिमय (Accrual basis) होना चाहिए। सेवा की प्रति इकाई लागत का मूल्यांकन करने तथा कार्य निष्पादन के साथ लागत की तुलना करने के मामले में कोष आधारित लेखा प्रणाली और भी बेहतर है।

4. सक्षम और भ्रष्टाचार मुक्त खरीद प्रणाली

सरकार द्वारा सामान और सेवाएँ खरीदने की सक्षम और भ्रष्टाचार मुक्त

प्रणाली का लक्ष्य हासिल करने के तीन उपाय हो सकते है:-

1. झूठा दावा अधिनियम (False Claim Act) पारित किया जाए,

2. सूचक सुरक्षा अधिनियम (Whistleblower Protection Act) पारित किया जाए और

3. निविदा (टेंडर) तथा बोली की चयन प्रक्रिया को पूर्णत: पारदर्शी बनाया जाए।

झूठा दावा अधिनियम (False Claim Act / Quit Tam Act) नागरिकों को किसी सामान अथवा सेवा की गुणवत्ता, मात्रा या कीमत के बारे में गलत दावा करने वाले आपूर्तिकर्त्ताओं पर मुकदमा दायर करने अथवा उनके संबंध में सूचना देने का अधिकार देगा। इससे निजी आपूर्तिकर्त्ता सरकार को धोखा देने से बचना चाहेंगे, क्योंकि कोई भी, यहाँ तक कि उनके अपने कर्मचारी भी, उनको दोषी ठहराने के लिए प्रमाण प्रस्तुत कर सकते हैं और पुरस्कारस्वरूप एक बड़ी राशि हासिल कर सकते हैं। निजी उद्यमियों तथा सरकारी कर्मचारियों के लिए झूठा दावा अधिनियम तथा सूचक सुरक्षा अधिनियम की व्यवस्था सरकारी खरीद तथा ठेके में भ्रष्टाचार और धोखाधड़ी को खत्म करेगा।

सभी प्रासंगिक विवरणों के साथ निविदाओं, सभी प्रस्तुत बोलियों तथा चयनित बोलियों को संबंधित विभाग और दिल्ली सरकार की वेबसाइट पर उपलब्ध कराने से खरीद की प्रक्रिया को पारदर्शी बनाया जा सकता है। निविदा के चयन की दो बोली पद्धति भ्रष्टाचार को कम करने की दृष्टि से काफी कारगर है।4 इस पद्धति में बोलीदाता अलग-अलग वित्तीय और तकनीकी बोली जमा करते हैं। सरकारी अधिकारी

पहले सिर्फ सर्वोत्तम तकनीकी बोलियों का चयन करते हैं। उसके बाद सिर्फ उन्हीं चयनित तकनीकी बोलियों की वित्तीय बोलियों को खोला जाता है। मिलीभगत की संभावना को खत्म करने की दृष्टि से दोनों प्रकारों की बोलियों की समीक्षा के लिए अलग-अलग अधिकारियों की नियुक्ति की जा सकती है।

5. कार्य निष्पादन (Performance) पर जोर

निजी क्षेत्र में सबसे महत्तवपूर्ण बात लाभ होती है। लाभ ही इस बात का सूचक होता है कि किसी संगठन द्वारा पेश की जाने वाली सेवाओं को लोग न सिर्फ खरीदना चाहते हैं, बल्कि लागत मूल्य से अधिक कीमत अदा करने के लिए भी तैयार हैं। तो सरकारी सेवाओं में सर्वाधिक जोर किस चीज पर दिया जाए? हम सरकारी महकमों के कार्य निष्पादन का मूल्यांकन कैसे कर सकते हैं?

सरकारी सेवाओं में उपभोक्ताओं की संतुष्टि पर निश्चित रुप से सर्वाधिक जोर दिया जाना चाहिए। रिपोर्ट कार्ड प्रणाली के माध्यम से विभिन्न सरकारी सेवाओं के उपभोक्ताओं से प्रतिक्रियाएं इकट्ठी की जा सकती हैं। अगर *अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान* (एम्स) की सेवाओं का उदाहरण लिया जाए, तो सर्वप्रथम ऐसे ही सर्वे से हम शुरू कर सकते हैं। तत्पश्चात् अस्पताल के प्रबंधकों को इस आधार पर कार्यनिष्पादन का एक मानक तय करना चाहिए कि एक वर्ष में उनकी सेवाओं के विभिन्न क्षेत्रों में संतुष्टि के स्तर को कितना बढ़ाना है। फिर उन्हें कार्यनिष्पादन को उस स्तर तक ऊँचा उठाने के लिए अपनी संपूर्ण कार्य-प्रणाली और कार्मिक प्रशिक्षण का तदनुरूप विकास करना चाहिए।

नागरिक घोषणापत्र के माध्यम से लक्ष्य, सेवाओं का स्तर और असफलता पर दंड की स्पष्ट व्यवस्था कर कार्यनिष्पादन का एक व्यापक मानक स्थापित किया जा सकता है।

इन सिद्धांतों को सभी सरकारी महकमों पर लागू किया जा सकता है। अलग-अलग विभागों में सुधार के विशिष्ट सुझाव तत्संबंधी अध्यायों में विस्तार पूर्वक दिए गए हैं।

आशा है पुस्तक में प्रतिपादित विचारों से सुशासन विषय पर एक गंभीर और रचनात्मक चर्चा का सूत्रपात होगा। सुधारवादी राजनीतिज्ञों, सरकारी कर्मचारियों तथा नागरिकों को निश्चित रूप से इस पुस्तक की सामग्री नवीन और उपयोगी लगेगी। परिचर्चा और बहस मुबाहिसों का सिलसिला शुरू हो, इसी कामना के साथ।

-पार्थ जे शाह

टिप्पणी

6. प्रधानमंत्री कार्यालय ने 2002 में दिल्ली के उपराज्यपाल को निर्देश दिया था कि हाथ रिक्शा चलाने वालों तथा ठेले वालों के लिए लाइसेंस प्रणाली खत्म की जाए और क्षेत्रीय सीमाओं के साथ साधारण पंजीकरण प्रणाली पर अमल किया जाए। दुर्भाग्य से प्रधानमंत्री कार्यालय के निर्देश के बावजूद अब तक कुछ भी नहीं बदला।

7. दिल्ली सरकार सरकारी विद्यालयों के लिए *दिल्ली पाठयपुस्तक ब्यूरो* के माध्यम से पाठयपुस्तकों का प्रकाशन करती है। अगर इन पाठयपुस्तकों को बाजार से खरीद कर उसे सस्ते मूल्य पर बेचा जाए, तो क्या यह सस्ता और कम झंझट वाला काम नहीं होगा? इससे नागरिकों को भी पता चलेगा कि पाठयपुस्तकों पर सरकार कितना अनुदान देती है। आज किसी को पता नहीं कि दिल्ली पाठयपुस्तक ब्यूरो चलाने में कितना खर्च होता है। पर हमने इस संबंध में कुछ

पता लगाने कि कोशिश की है।

8. संबंधित अध्याय में हमने खाद्य पर्चे के द्वारा जन वितरण प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन का सुझाव रखा है।

9. दिल्ली नगर निगम के आयुक्त राकेश मेहता ने दिल्ली नगर निगम की निविदाओं के लिए दो बोली पद्धति का अनुमोदन कर दिया है।

3. सूचना का अधिकार अधिनियम

'सूचना का अधिकार' से 'सूचना प्रकाशन कार्य कर्त्तव्य' की ओर

भारतीय संसद की लोकसभा तथा राज्यसभा ने क्रमश: 11 मई तथा 12 मई, 2005 को 'सूचना का अधिकार विधेयक' पारित कर आम जनता को शक्तिशाली बनाने का एक और मार्ग खोल दिया है। फिलहाल दिल्ली सहित देश के नौ राज्यों में सूचना का अधिकार अधिनियम लागू है। ये राज्य हैं- तमिलनाडु, गोवा, राजस्थान, कर्णाटक, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, आसाम और जम्मू कश्मीर।

दिल्ली में यह वर्ष 2002 में पारित हुआ। सूचना का अधिकार अधिनियम, दिल्ली के अनुसार हर नागरिक को यह अधिकार है कि वह सरकार से उसकी किसी भी गतिविधि, प्रावधान, योजना आदि से संबंधित कोई सूचना मांग सकता है। फिलहाल दिल्ली सरकार के 119 विभागों को इस अधिनियम के दायरे में रखा गया है।

स्वीडन में भ्रष्टाचार लगभग न के बराबर है। ज्ञात हो कि वहाँ पिछले 200 सालों से भी अधिक समय से (1776 ई. से) इस प्रकार का अधिनियम लागू है।

यद्यपि इस अधिनियम से प्रशासन पूरी तरह भ्रष्टाचारमुक्त हो जाएगा, यह नहीं कहा जा सकता, तब भी सूचना का अधिकार अधिनियम प्रशासनिक सुधार की ओर एक अच्छा कदम है।

ऐसे तो अभी बहुत कम लोगों को इस अधिनियम की जानकारी है, तब भी कई लोगों और नागरिक समूहों ने इस अधिनियम का उपयोग कर प्रशासनिक भ्रष्टाचार को उजागर कर समय रहते इस पर

काबू पाया है।

प्रस्तुत हैं दो उदाहरण :

एक: पटपड़गंज में एक कूड़ाघर का दिल्ली नगर निगम द्वारा जीर्णोद्धार किया गया था। वहाँ के निवासियों ने पाया कि जीर्णोद्धार के नाम पर सिर्फ कूड़ाघर के फर्श को ही ठीक किया गया है। बाकी कुछ भी नहीं हुआ। निवासियों ने सूचना का अधिकार अधिनियम के तहत कार्य के ठेके की प्रति मांगी। उन्हें यह जानकर ताज्जुब हुआ कि ठेके के अनुसार एक लोहे का फाटक भी लगाया जाना था और दीवारों को प्लास्टर करना था, जबकि कुछ भी नहीं हुआ था और राशि का भुगतान भी कर दिया गया था! सिर्फ ठेके की प्रतिलिपि मांगने का ही इतना असर हुआ कि एक सप्ताह के अंदर बचा-खुचा कार्य भी पूरा कर दिया गया।

दो: करीब दो साल पहले दिल्ली के कई लोगों ने गरीबी रेखा से नीचे वाले राशन कार्ड के लिए आवेदन किया था। काफी समय बीत गया। लेकिन उन्हें न तो राशन कार्ड मिला न ही यह बताया गया कि उन्हें कार्ड मिलेगा भी या नहीं। उन्होंने राशन कार्यालय के कई चक्कर लगाए। पर अधिकारीगण टाल-मटोल करते रहे। इस संबंध में सूचना का अधिकार अधिनियम के तहत सुंदर नगरी और नई सीमापुरी के लाभार्थियों की सूची देखी गई। सूची से पता चला कि कई लोगों के कार्ड कई माह पूर्व बन चुके थे और वे कार्ड वहाँ के स्थानीय दुकानदारों के कब्जे में थे, जो महीनों से उनके नाम पर राशन उठा रहे थे। खाद्य विभाग के सर्वोच्च अधिकारियों के हस्तक्षेप के बाद कार्ड के असली

हकदार को उनका कार्ड लौटा दिया गया।

इस तरह यह अधिनियम आम नागरिकों, नागरिक समूहों, संगठनों इत्यादि किसी को भी यह सुविधा देता है कि वे सरकार की गतिविधियों तथा सरकार द्वारा दिए गए ठेकों पर कड़ी नजर रख सकें।

फर्ज कीजिए आपकी गली में सड़क बन रही है। उसकी गुणवत्ता पर आपको शक है तथा उसमें किसी घोटाले की संभावना है। तो आप इस अधिनियम का लाभ उठा सकते हैं। आप कुछ निर्धारित प्रारूप में संबंधित विभाग के सक्षम अधिकारी से इस कार्य से संबंधित सूचनाओं की मांग कर सकते हैं। जैसे, इस कार्य का ठेका किसे दिया गया है? यह कितने रुपये की योजना है? कार्य की पूर्णता का प्रमाणपत्र किसने निर्गत किया? कितने दिनों में कार्य पूरा होना था? आदि-आदि। संबंधित पदाधिकारी को पंद्रह दिनों के अंदर अथवा अधिकतम तीस दिनों के अंदर आपके प्रश्नों का जवाब देना होगा। जवाब आप हिंदी अथवा अंग्रेजी में मांग सकते हैं। संतोषजनक उत्तर न मिलने पर अथवा अधिकारियों द्वारा आपके प्रश्नों का जवाब नहीं देने पर आप जन शिकायत आयोग से निर्धारित प्रारूप में शिकायत कर सकते हैं। सभी विभागों में प्रारूप-पत्र नि:शुल्क उपलब्ध हैं। परंतु सूचना हासिल करने हेतु थोड़ा शुल्क अदा करना होता है। साधारण सूचना के लिए पचास रुपये तथा ठेके या संविदा संबंधी सूचना के लिए पाँच सौ रुपये जमा करने होते हैं। साथ ही किसी दस्तावेज की प्रतिलिपि हासिल करने हेतु प्रति पृष्ठ पाँच रुपये की दर से प्रतिलिपि शुल्क लगता है।

यद्यपि यह अधिनियम प्रशासनिक सुधार की दिशा में एक महत्तवपूर्ण कदम है और अन्य राज्यों के सूचना का अधिकार

अधिनियमों से अधिक प्रभावी है, फिर भी इसमें कुछ बड़ी खामियाँ रह गयीं हैं। जैसे-

कोई स्वतंत्र अपीलीय प्रणाली नहीं बनायी गई है। सरकार ने कार्य को अंजाम देने और लापरवाही के लिए शिकायत सुनने तथा सजा देने की भूमिका सब अपने हाथ में रख ली है, जिसकी वजह से अधिकारियों पर अपना काम जिम्मेदारीपूर्वक करने का कोई दबाव नहीं है। साथ ही जन शिकायत आयोग के आदेश का पालन न करने पर सजा का कोई स्पष्ट प्रावधान भी नहीं है।

इस अधिनियम के तहत सूचना हासिल करने के लिए काफी महंगा शुल्क अदा करना होता है। गरीब न तो अकेले इतना शुल्क अदा कर सकते हैं न ही वे साधारणत: इतना संगठित रहते हैं कि मिल कर शुल्क अदा करें। ध्यान रहे कि यह अधिनियम सरकार के लिए राजस्व उगाही का माध्यम नहीं है, बल्कि इसका मकसद यह है कि लोग अपने अधिकार का अधिक से अधिक उपयोग करें और सरकारी प्रक्रिया से भ्रष्टाचार का खात्मा हो।

इस प्रकार सूचना का अधिकार अधिनियम में कुछ बड़ी कमियाँ हैं, जिसे दूर किए जाने की आवश्यकता है। इस अधिनियम में निम्नलिखित सुधार किए जा सकते हैं:

सूचना का अधिकार अधिनियम को सशक्त करने के उपाय

—अगर व्यापक सूचना की मांग की गई हो, तो संबंधित अधिकारी को चाहिए कि मांग को इस अधिनियम के दायरे में सीमित करने में मदद करें।

—अपील के लिए एक स्वतंत्र द्वि-स्तरीय प्रणाली स्थापित करनी चाहिए। अपील प्राधिकारी को रिकार्ड तथा सरकारी अधिकारी को समन करने का तथा दंड लगाने का न्यायिक अधिकार होना चाहिए। विशेष कर दंड से संबंधित नियम 6 में कुछ ऐसे सुधार करने की जरूरत है, जिससे दंड सिर्फ सक्षम प्राधिकारी पर ही नहीं, बल्कि उन सभी अधिकारियों पर भी लगाये जा सकें, जो या तो अधिनियम का उल्लंघन करते हैं या नियम के उल्लंघन के लिए किसी भी प्रकार से जिम्मेदार हैं।

—यद्यपि इस अधिनियम में यह व्यवस्था है कि हर विभाग एक नियमित अंतराल पर कुछ सूचनाओं का प्रकाशन करेगा, तथापि इसमें कुछ अन्य विषयों को जोड़ा जाना चाहिए जैसे- बजट, कार्मिक, योजनाएँ और कार्यक्रम, वेतन और मजदूरी, टेंडर और ठेका, आदि। 'सूचना का अधिकार अधिनियम' की जगह इसे ***सूचना प्रकाशन कार्य कर्त्तव्य अधिनियम*** होना चाहिए।

—आवेदन और प्रतिलिपि शुल्क कम किया जाना चाहिए। उच्च दरों पर तत्काल सेवा की व्यवस्था की जा सकती है।

—दिल्ली नगर निगम और लोक निर्माण विभाग तथा अन्य किसी भी सरकारी एजेंसी द्वारा दिये गए सभी ठेकों के दस्तावेजों को चुनिंदा पुस्तकालयों और निकटस्थ सरकारी विद्यालयों में रखा जाना चाहिए तथा संबंधित क्षेत्र के रेजीडेंट वेलफेयर एसोसिएशनों को भी दिया जाना चाहिए। निविदाओं (टेंडरों) और ठेकों को विभाग की वेबसाइट पर भी रखा जाना चाहिए। तथा संबंधित कार्यों की प्रगति रिपोर्ट का नियमित नवीनीकरण किया जाना चाहिए। सूचना डिजिटल रूप (फ्लॉपी) में भी दी जानी चाहिए, जिससे कागज की बचत भी हो तथा दस्तावेज अधिक

बड़ा होने पर मूल्य भी कम बैठे।

इसके बावजूद, दिल्ली का *सूचना का अधिकार अधिनियम* अपने वर्तमान स्वरूप में भी अन्य राज्यों में लागू अधिनियमों से अधिक प्रभावी है। बड़े आश्चर्य की बात है कि दिल्ली सरकार ने इस अधिनियम को अपनी विशेष उपलब्धि के रूप में मान्यता नहीं दी है। प्रशासन से भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, लापरवाही आदि दोषों को दूर करने में इस अधिनियम की महत्तवपूर्ण भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता है। प्रशासनिक दोषों से लड़ने हेतु जनता इसे हथियार के रूप में इस्तेमाल कर सकती है। इस अधिनियम का अधिकाधिक इस्तेमाल करके ही इसे और अधिक मजबूत बनाया जा सकता है तथा सुशासन का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है।

शोध- नवीन मांडवा

4. शिक्षा

पैसा छात्रों को दें, विद्यालयों को नहीं

शिक्षा के मोर्चे पर सरकार की गतिविधियों का मूल्यांकन करने के लिए निम्नलिखित तथ्यों पर गौर किया जा सकता हैः

—दिल्ली की 1,200 झुग्गी बस्तियों में पाँच लाख से अधिक बच्चे ऐसे हैं, जो स्कूली शिक्षा से वंचित हैं। उनके लिए कम से कम एक हजार विद्यालयों की जरूरत है।

—नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) के अंतर्गत में दिल्ली में कुल 230 नये विद्यालय खोलने का तथा उसमें 1.3 लाख बच्चों के नामांकन का लक्ष्य रखा गया था, पर दिल्ली नगर निगम सिर्फ 92 विद्यालय खोलने तथा उसमें 91 हजार बच्चों का नामांकन करने में ही सफल रही।

—यद्यपि दिल्ली नगर निगम के विद्यालयों में शिक्षक और छात्र के बीच 1:45 का अनुपात तो ठीक है, पर कुछ विद्यालयों में एक शिक्षक तीन-चार कक्षाओं के लगभग दो सौ बच्चों को अकेले ही पढ़ाते हैं।

—सोशियल जूरिस्ट के एक अध्ययन से पता चलता है कि दिल्ली नगर निगम के विद्यालयों से पाँचवीं कक्षा तक पढ़े अस्सी फीसदी बच्चों को अपना नाम तक लिखना-पढ़ना नहीं आता।

उपर्युक्त तथ्यों से पता चलता है कि जहाँ एक ओर दिल्ली सरकार सभी जरूरतमंदों के लिए समुचित शिक्षा की व्यवस्था करने में असफल रही है, वहीं पहले से मौजूद विद्यालयों के कुशल संचालन में भी असफल

रही है। इसके साथ ही सरकारी विद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा की गुणवत्ता का स्तर भी बहुत निम्न है। जबकि और भी बहुत कुछ करना बाकी है यथा, विद्यालयों की संख्या बढ़ानी है और पहले से मौजूद विद्यालयों की व्यवस्था को और प्रभावी बनाना है। क्या सरकार के लिए इतना कुछ कर पाना संभव है? इस संबंध में निम्नलिखित सुझावों पर ध्यान दिया जा सकता है :

सुधार के सुझाव

शिक्षा क्षेत्र में सुधार के लिए हमें सरकारी खर्च की राशि की अपेक्षा प्रकृति पर ध्यान देना होगा। सरकार किस मद पर कितना खर्च कर रही है, इस आधार पर उसके कार्यों का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। मूल समस्या अध्यापन की पद्धति में निहित है। हम दुनिया भर में जाँचे-परखे जा चुके कुछ ऐसे समाधानपरक उदाहरणों को यहाँ रखना चाहेंगे, जो छात्रों और अभिभावकों की जरूरतों तथा सबसे पिछड़े समाज के लिए सर्वथा अनुकूल ही नहीं, बल्कि शैक्षिक स्तर ऊँचा उठाने में भी कामयाब हैं।

सुधारवादी विचारों के मूल में यह धारणा है कि यदि हम यह मान भी लें कि शिक्षा पर सरकार को खर्च करना चाहिए, तो भी यह मानने का कोई तुक नहीं कि सरकार अथवा स्थानीय प्रशासन को शिक्षा उपलब्ध कराने के कार्य से सीधे तौर पर जुड़ना चाहिए। ऐसे तो रोटी और कपड़ा भी हमारी मौलिक आवश्यकताएं हैं, जिनके लिए सरकार विभिन्न सहायता कार्यक्रम चलाती है, पर उसके लिए सरकार सीधी तौर पर दुकानें तो नहीं चलाती! और सच्चाई तो यह है कि इन

वस्तुओं के लिए इतनी विशाल संख्या और विविध रूपों में दुकानों के होने से हर किसी को फायदा ही है। यही कारण है कि इतने लंबे समय से राजकीय नियंत्रण और एकाधिकार में चलने के बाद शिक्षा की दुनिया अब अभिभावकों के सशक्तीकरण और विकल्पों की प्रचुरता की ओर बढ़ रही है। चूँकि अब तक अभिभावकों के पास कोई विकल्प नहीं था, अत: इस सेवा में शिक्षा प्रदान करने वालों का विचार ही सर्वोपरि रहा, शिक्षा हासिल करने वालों का नहीं। समृद्ध लोग तो अपने बच्चों को खर्चीले निजी विद्यालयों में पढ़ाने में सक्षम हैं, पर सरकारी व्यवस्था में जिन लोगों तक शिक्षा पहुँचाने पर सर्वाधिक जोर दिया गया है, उन्हें शिक्षित करने में यह व्यवस्था सफल नहीं हो पायी है।

गरीबों के लिए 'सरकारी सहायता न पाने वाले निजी विद्यालय'

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ के शहरी क्षेत्रों में एक सर्वेक्षण किया गया। इसमें छात्रों की विशिष्ट प्रतिभा, पारिवारिक स्तर, घर में उपलब्ध पुस्तकों की संख्या आदि कारकों को स्थिर मान लिया गया तथा गणित की एक मानक परीक्षा ली गई। इस परीक्षा में *सरकारी सहायता न पाने वाले निजी विद्यालयों* के छात्रों ने दूसरी तरह के विद्यालयों के छात्रों से तीस प्रतिशत अधिक अंक अर्जित किए। साथ ही जब प्रत्येक अर्जित अंक पर लागत का हिसाब किया गया, तो सरकारी विद्यालय की तुलना में सरकारी सहायता न पाने वाले निजी विद्यालय में खर्च आधे से भी कम बैठा। सरकारी विद्यालय में जहाँ प्रति विद्यार्थी खर्च 2,008 रुपये आया, वहीं *सरकारी सहायता प्राप्त निजी विद्यालय* में यह 1,827 रुपये था, जबकि सरकारी सहायता न पाने वाले निजी विद्यालय में यह 999

रुपये था। अध्ययन में पाया गया कि अभिभावकों ने अपने बच्चों के लिए अधिक प्रतिभा तथा योग्यता के लिहाज से निजी विद्यालय का चयन किया। कई विकासशील देशों मे किये गए अनेक अध्ययनों से पता चलता है कि निजी विद्यालय न सिर्फ शैक्षिक रूप से अधिक प्रभावशाली हैं, बल्कि अधिक सक्षम भी हैं।

वस्तुत: भारत में गरीबों ने भी सरकारी विद्यालयों के बनिस्पत निजी विद्यालयों को प्राथमिकता देनी शुरू कर दी है। छठे अखिल भारतीय शिक्षा सर्वे में पाया गया है कि निजी विद्यालयों में नामांकन प्रति वर्ष 9.5 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है, जबकि सरकारी विद्यालयों में यह वृद्धि दर सिर्फ 1.4 फीसदी ही है।

हैदराबाद जिले में किये गए सर्वेक्षण से पता चलता है कि 61 प्रतिशत विद्यार्थी सरकारी सहायता न पाने वाले निजी विद्यालयों में शिक्षा अर्जित कर रहे हैं। गरीबों के लिए चलने वाले इन निजी विद्यालयों में पचास से एक सौ पचास रुपये तक मासिक शुल्क लिया जाता है। यहाँ छात्र और शिक्षक का अनुपात 29:1 है। अधिकांश शिक्षक स्नातक हैं। अधिकांश विद्यार्थियों के पिता दिहाड़ी पर काम करने वाले मजदूर हैं। 30 फीसदी माँएँ अशिक्षित हैं। लेकिन वे विद्यालय का चयन करने के मामले में काफी सतर्क हैं। इसका पता इसी बात से चलता है कि उनमें से दो-तिहाई ने अपने बच्चों के नामांकन हेतु कम से कम दो विद्यालयों पर विचार किया। चूँकि अधिकांश निजी विद्यालय सभी सरकारी नियमों पर खरे नहीं उतरते हैं, अत: वे अवैध माने जाते हैं। फलत: उन्हें नियमित रूप से सरकारी अधिकारियों को रिश्वत के रूप में एक मोटी रकम देनी पड़ती है।

दमघोंटू नियम

वर्तमान नियम-कानून सस्ते विद्यालयों की राह में सबसे बड़ी बाधा है।

दिल्ली के विद्यालयों में संसद द्वारा 1973 में परित *दिल्ली राज्य शिक्षा अधिनियम और कानून* के आधार पर शिक्षा दी जा रही है। तब से अब तक कितनी सरकारें आयीं और गईं, लेकिन इसमें सुधार का थोड़ा प्रयास भी नहीं हुआ है। राजधानी में शिक्षा से वंचित बच्चों की शिक्षा के मार्ग में यह अधिनियम सबसे बड़ी बाधा है। इस अधिनियम में नया निजी विद्यालय खोलने के मार्ग में अनेक बाधाएँ खड़ी की गईं हैं। इससे एक ओर जहाँ विद्यालय खोलने की प्रकिया काफी खर्चीली हो गई है, वहीं इसमें समय भी काफी लगता है। दिल्ली में आठवीं कक्षा तक का विद्यालय खोलने के लिए लगभग 14 लाइसेंस और अनुमानत: लगभग चालीस लाख रुपयों की जरूरत पड़ती है।

वैट्स समिति ने इस कानून (दिल्ली राज्य शिक्षा अधिनियम) को अप्रासंगिक करार दिया है। समिति के अनुसार "इस कानून को तब लागू किया गया था, जब कुछ ही विद्यालय थे। सरकारी विद्यालयों के लिए जहाँ नियम-कानूनों में काफी ढील बरती गई है, वहीं सरकारी सहायता पाने अथवा न पाने वाले *निजी विद्यालयों* को विभिन्न नियमों और कानूनों से जकड़ दिया गया है।"

सरकारी सहायता पाने अथवा न पाने वाले निजी विद्यालयों के प्रति इस कठोर रवैये ने निजी विद्यालयों की कार्यप्रणाली को गंभीर क्षति पहुँचाई है। इन विद्यालयों के अधिकारीगण बराबर इन कड़े नियमों के प्रति शिकायत करते रहे हैं, जिनकी वजह से वे अच्छे तथा बुरे

शिक्षकों को पुरस्कृत अथवा दंडित नहीं कर सकते। सभी निर्णय निदेशालय द्वारा लिये जाते हैं, जिनमें अनावश्यक रूप से विलंब होता है, क्योंकि प्राय: विद्यालय काफी दूर-दराज के क्षेत्र में चल रहा होता है, जहाँ टेलीफोन तक की सुविधा नहीं होती है।

गौरतलब है कि इन्हीं नियमों की वजह से नौकरशाही का महत्त्व बरकरार है। नौकरशाही बजट को तो बढ़ाती ही है, नियमों को उससे भी अधिक जटिल बना देती है। शिक्षा निदेशालय से संबंधित एक हजार से अधिक मामलों पर न्यायालय में सुनवाई चल रही है तथा चालीस से अधिक अवहेलना याचिका विचाराधीन हैं। विद्यालय खोलने तथा उसे चलाने से संबंधित नियमों तथा कानूनों का सरलीकरण बेहद जरूरी है। इस क्षेत्र को इन जटिल कानूनों से मुक्त करके सेवा प्रदाताओं के आसान प्रवेश और निकास की व्यवस्था की जानी चाहिए।

इस अधिनियम में एक और विशेष प्रावधान है, जिसके तहत विद्यालय लाभ कमाने के सिद्धांत पर नहीं चल सकता। सिर्फ ऐसे ट्रस्ट और समिति ही विद्यालय और महाविद्यालय चला सकते हैं, जो लाभ नहीं कमाते हों। अगर शिक्षा संस्थानों को लाभकारी व्यवसाय के रूप में मान्यता दे दी जाए, तो उससे भला क्या नुक्सान हो सकता है? हम जानते हैं कि अनेक विद्यालय भारी मुनाफा कमा रहे हैं। अलाभकारी प्रावधान शिक्षा व्यवस्था में भ्रष्टाचार तथा अवैध गतिविधियों को बढ़ावा देता है। फिर व्यर्थ का आडंबर क्यों पाला जाए? क्यों न शिक्षा संस्थानों को लाभ कमाने की अनुमति प्रदान कर दी जाए!

शिक्षा (विद्यालयों/महाविद्यालयों) में सुधार तथा इसे नौकरशाही के शिकंजे से मुक्त करने के लिए एक सुझाव यह है कि शिक्षण संस्थाओं

के लिए सरकारी नियमों से बाहर रहने का विकल्प खुला रखा जाए। उनके लिए सिर्फ इतनी ही बाध्यता हो कि जो संस्थान नियमों से बाहर रहना चाहते हैं, वे एक बडा-सा पट्ट लगाएँ, जिस पर स्पष्ट रूप से 'अनियमित' लिखा हो तथा यह भी लिखा हो कि इस संस्थान से संबंध बनाने वाले संभावित नुकसान उठाने को तैयार हैं। इसी तरह नियमों के अधीन चलने वाले संस्थान भी ऐसा ही पट्ट लगा कर उस पर लिख सकते हैं कि 'हमें सभी सरकारी नियम-कानूनों का पालन करने का गौरव प्राप्त है'।

हरियाणा में गैर मान्यताप्राप्त विद्यालयों पर किये गए एक अध्ययन से पता चलता है कि 18.7 फीसदी बच्चे ऐसे विद्यालयों में पढ़ते हैं। शोधार्थी दल इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि उनके लिए मान्यताप्राप्त और गैर मान्यताप्राप्त विद्यालयों में कोई स्पष्ट अंतर नहीं है। अत: इन व्यर्थ के आडंबरों को यथाशीघ्र खत्म कर दिया जाना चाहिए।

यदि नौकरशाही पर खर्च होने वाली राशि को भी जोड़ दिया जाए, तो राजकीय शिक्षा निजी शिक्षा से महंगी बैठती है। क्यों? क्योंकि शिक्षा के लिए आवंटित राशि का अधिकांश हिस्सा दूरस्थ अधिकारियों द्वारा अनुचित कार्यों पर खर्च कर दिया जाता है। तो इसका समाधान? इस राशि को अग्रिम पंक्ति के प्रबंधकों के हवाले कर दीजिए।

विद्यालयों को निजी हाथों में सौंपें, छात्रों को शिक्षा पर्चा दें

अगर सरकार स्वयं विद्यालय चलाना छोड़कर दूसरों को इसके लिए सुविधा दे, तो शिक्षा और समानता दोनों का स्तर ऊँचा उठेगा। सरकार

विद्यालय का प्रबंधन निजी संगठनों के हाथों में सौंप सकती है। ऐसा उन विद्यालयों के साथ भी किया जाना चाहिए, जहाँ अंग्रेजी की पढ़ाई पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता है। (अगर आप एक अध्ययन करें कि राजनितिज्ञों, प्रशासनिक अधिकरियों और सरकारी शिक्षकों के बच्चे कहाँ पढ़ते हैं, तो आपको सहज ही पता चल जाएगा कि इस निर्णय से सर्वाधिक नुक्सान गरीबों को क्यों हुआ है।) सरकार को सिर्फ विद्यालयों के कोष की व्यवस्था करनी चाहिए, जो विद्यालय में विद्यार्थियों की कुल संख्या के आधार पर सुनिश्चित किया जा सकता है। शिक्षकों को गैर सरकारी आधार पर नियुक्त किया जा सकता है और सरकार उनके कार्यों के परिणाम के आधार पर कोष का भुगतान कर सकती है। सूचना का अधिकार अधिनियम, दिल्ली 2001 के तहत् 'परिवर्तन' द्वारा प्रदत्त सूचनाओं के अनुसार दिल्ली नगर निगम प्रतिवर्ष प्रत्येक विद्यार्थी पर 4797.46 रुपये खर्च करती है, जिसमें वेतन, भवन-निर्माण, मूलभूत सुविधाएँ तथा दोपहर का भोजन शामिल हैं। अगर विद्यालयों के बीच मुक्त प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा दिया जाए, तो इतनी ही राशि से विद्यार्थियों और अभिभावकों को अधिक फायदा मिल सकता है।

इसके साथ ही अभिभावकों को उनके बच्चों की शिक्षा का खर्च वहन करने के लिए शैक्षिक पर्चा दीजिए। उन्हें अपने बच्चों के लिए सही विद्यालय का चयन करने दीजिए। विद्यालय उनके शैक्षिक पर्चे के बदले सरकार से रकम प्राप्त कर सकता है। इसके तहत ही विद्यार्थियों को बस पास भी दिया जाना चाहिए, ताकि वे अपनी पसंद के विद्यालयों तक आसानी से पहुँच सकें। विद्यालयों को अभिभावकों को एक ग्राहक की तरह संतुष्ट करने का मौका दीजिए। अभिभावकों के शैक्षिक पर्चे का

उपयोग उन्हें विद्यालय चलाने तथा विकास कार्य में करने दीजिए। दूसरे शब्दों में विद्यालय हेतु वित्तीय कोष अभिभावकों के रास्ते नीचे से आने दीजिए न कि ऊपर से प्रशासन के विभिन्न स्तरों से होते हुए। शैक्षिक पर्चे का महत्व अभिभावकों के लिए उनके बच्चे को पढ़ाने हेतु अधिक सहयोग के रूप में ही नहीं, बल्कि विद्यालयों के चयन हेतु विकल्प पैदा करने के रूप में भी है। साथ ही सरकार निजी हाथों में सौंपे गये इन विद्यालयों का तकनीकी रूप से सत्यापित किए जा सकने योग्य आधारों (जैसे, उपस्थिति और परिणाम) पर मूल्यांकन करके उसे प्रकाशित कर सकती है।

जिस प्रकार शिक्षा प्रदान करने के मामले में एकाधिकार नुकसानदेह है, उसी प्रकार मूल्यांकन में भी एकाधिकार नुक्सानदेह होगा। शिक्षा प्रदाताओं के बीच प्रतिस्पर्धा तथा उसी प्रकार मूल्यांकनकर्त्ताओं के बीच प्रतिस्पर्धा से शिक्षा का स्तर ऊँचा उठेगा। शिक्षा की गुणवत्ता पर नजर रखने के लिए स्वतंत्र मूल्यांकन ओर प्रमाणन एजेंसी को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। पुन: ऐसी एजेंसियों के एकाधिकार अथवा कुछ हाथों में अधिकार की जगह अगर इनके बीच मुक्त प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा दिया जाए, तो अधिक तथ्यपरक और सही सूचना सामने आएगी। इससे विद्यार्थी और अभिभावक दोनों के लिए ही सभी सूचनाओं की रोशनी में निर्णय ले पाना संभव होगा। समाचार पत्र-पत्रिकाएँ श्रेष्ठ विद्यालयों और महाविद्यालयों के बारे में सर्वेक्षण भी कर सकते हैं।

सरकार को शिक्षण कार्य में स्वयं उलझने की जगह बेहतर परिणाम पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। बेहतर परिणाम देने वालों

को पुरस्कृत कर उन्हें सेवा में नये-नये प्रयोग करने हेतु प्रोत्साहित किया जा सकता है। एक बेहतर प्रयास यह हो सकता है कि विद्यालय के अंदर सफाई व्यवस्था सुलभ इंटरनेशनल जैसी एजेंसियों को ठेके पर दी जाए। विद्यालयों का भागीदारी प्रबंधन मूलत: कार्यपरिणाम केंद्रित व्यवस्था है न कि सेवा प्रदाता केंद्रित। वित्त, अधिकार और जवाबदेही सौंपे बिना विद्यालय प्रबंधन समिति में सामाजिक संगठनों के प्रतिनिधियों को शामिल करने का कोई सुपरिणाम सामने नहीं आ सकता।

दिल्ली नगर निगम द्वारा संचालित कुप्रबंधन और स्तरहीनता के शिकार लगभग 30 विद्यालयों के स्तर में सुधार हेतु निजीकरण के लिए हम दिल्ली के पूर्व शिक्षा मंत्री राजकुमार चौहान की पहल की सराहना करते हैं। उनके इस कदम का सबसे अधिक फायदा गरीबों को मिलेगा, क्योंकि अमीर तो बेहतर विद्यालयों में आसानी से प्रवेश पा लेते हैं, लेकिन गरीब विकल्प के अभाव में परिस्थितियों के फंदे में फँसे रह जाते हैं। हालाँकि उनका यह प्रयास शिक्षा के व्यवसायीकरण को गलत मानने की प्रवृत्ति के कारण व्यर्थ हो गया। जबकि इन उपायों को बांग्लादेश और चिली में सफलता पूर्वक आजमाया जा चुका है। फिर कोई कारण नहीं है कि हम पीछे रहें अथवा शेष भारत में इस प्रयोग को आजमाने में अग्रणी न बनें।

शिक्षा क्षेत्र में विकल्प, प्रतिस्पर्धा और उद्यमिता का प्रवेश उल्लेखनीय कार्य करेगा। यह चरमपंथी विचार नहीं है, बल्कि दुनिया भर में आजमाए गये नजरिये का ही एक सामान्य रूप है। इन विचारों को लागू करने का समय आ गया है। चूँकि इससे नौकरी में खासी कटौती

होगी, अत: कुछ निहित स्वार्थों (जैसे, स्तर कायम न रख सकने वाले शिक्षकों और अधिकारीगण) का विरोध झेलना पड़ सकता है। लेकिन चूँकि इससे विद्यार्थियों और अभिभावकों को काफी संतुष्टि मिलेगी, अत: वे इस कार्य में लगे राजनीतिज्ञों को भरपूर समर्थन देंगे। इसके राजनीतिक लाभ भी स्पष्ट हैं। राजनीतिज्ञ आसानी से कुप्रबंधन की जिम्मेदारी सेवा प्रदाता के सिर मढ़कर उससे किये समझौते को भंग कर सकते हैं। यह हर हाल में उस नौकरशाही को झेलने से आसान ही होगा, जो विशेष परिस्थिति अथवा जनहित में जिम्मेदारी और दक्षतापूर्वक कार्य करने में प्राय: असफल ही रही है।

विकासमान निजी अध्यापन (टयूशन) उद्योग तथा गैर मान्यताप्राप्त विद्यालयों की प्रचुरता के संकेत को समझते हुए हम निजी अध्यापकों को अध्यापन की अनुमति भी दे सकते हैं। इतना ही नहीं, यदि उनके विद्यार्थी सार्वजनिक परीक्षा में किसी पूर्वनिर्धारित प्राप्तांक से अधिक अंक प्राप्त करते हैं, तो उन्हें विद्यार्थियों के लिए निर्धारित राशि के हिसाब से पैसे भी आवंटित किये जा सकते हैं। दिल्ली में राजकीय मुक्त विद्यालय भी शुरू किया जा सकता है। इससे छात्र इस विद्यालय में पढ़ते हुए ऐसे विद्यालयों अथवा महाविद्यालयों में दाखिले के लिए आवेदन भी कर सकते हैं, जो या तो सीबीएसई या आइसीएसई बोर्ड का पालन करते हैं अथवा दिल्ली के विश्वविद्यालयों के अंतर्गत चल रहे हैं। इससे अनौपचारिक शिक्षा को बढ़ावा मिलेगा तथा पढ़ाई बीच में छोड़ देने जैसी समस्याएँ कम होंगीं, अत: नामांकन की समस्या भी कम होगी। इससे दसवीं पंचवर्षीय योजना में निम्नलिखित मदों के लिए निर्धारित रकम सीधे संस्थानों के प्रधानाचार्यों के पास पहुंचेंगी।

मद		राशि
1. पाठयपुस्तकों की मुफ्त आपूर्ति	-	150 लाख रु.
2. पुस्तक कोष का सशक्तीकरण	-	150 लाख रु.
3. विद्यालय के पुस्तकालयों का विकास	-	150 लाख रु.
4. पोशाक पर अनुदान	-	600 लाख रु.
5. विद्यालय स्तर पर विज्ञान की पढ़ाई का विकास और विस्तार	-	65 लाख रु.
6. शैक्षिक पर्यटन	-	30 लाख रु.
7. शैक्षिक और व्यावसायिक परामर्श	-	20 लाख रु.

उपभोक्ता की जरूरतों को सेवा प्रदाता से बेहतर भला और कौन जान सकता है? कोष के हस्तांतरण में पूर्ण पारदर्शिता बरतनी चाहिए तथा इस संबंध में पूरी जानकारी विद्यार्थियों और अभिभावकों को भी दी जानी चाहिए। इस तरह से विद्यालय प्रबंधन पर छात्रों को सही शिक्षा देने तथा अभिभावकों को संतुष्ट रखने का एक स्थायी दबाव बना रहेगा।

निदेशालय के तहत संस्थानों के कार्यकलाप में सुधार हेतु निम्नलिखित अन्य कदम उठाए जा सकते हैं :-

1. निदेशालय के खर्च और कार्य निष्पादन बजट में पारदर्शिता (यानी, वे राशि का कैसे इस्तेमाल करते हैं तथा बेहतर परिणाम कैसे हासिल करते हैं) और स्थापना शुल्क का विवरण (उन्होंने स्वयं पर कितना खर्च किया) दिया जाना चाहिए।

2. परिणाम के लक्ष्य वास्तविक विद्यालय कार्यों की मांग का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। विद्यालय के आपूर्ति से संबंधित पक्ष अभिभावकों की आशा के अनुरूप होने चाहिए तथा जो विद्यालय इन

4. सरकार को छात्रों के अभिभावकों के प्रति पारदर्शिता सुनिश्चित करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए तथा स्वतंत्र एजेंसियों को विद्यालयों के मूल्यांकन की अनुमति देनी चाहिए, ताकि विद्यार्थी पूर्ण जानकारी के आधार पर विकल्प चुनने में सक्षम हो सके।

5. सभी जाँच अथवा समिति रिपोर्टों को सार्वजनिक किया जाना चाहिए।

6. एजेंसियों की बढ़ती तादाद के बावजूद (हमारे यहाँ शिक्षा, उच्च शिक्षा तथा प्रशिक्षण और तकनीकी शिक्षा के लिए अलग-अलग निदेशालय हैं) निर्णय निर्माण की प्रक्रिया पूर्णत: उच्च स्तर पर केन्द्रित है। अत: निर्णय निर्माण की प्रक्रिया का विकेन्द्रीकरण कीजिए, ताकि वास्तविक आपूर्तिकर्त्ता ही सीधे तौर पर वास्तविक लाभार्थी के प्रति जवाबदेह हो।

7. दोपहर का भोजन (मिडडे मील) और ऐसी अन्य योजनाएँ सीधे प्रधानाचार्य के नियंत्रण में होनी चाहिए। वे चाहें तो स्वतंत्र रूप से भोजन के आपूर्तिकर्त्ता को इसका ठेका दे सकते हैं अथवा सही आपूर्तिकर्त्ता नियुक्त करने के लिए निदेशालय की मदद ले सकते हैं। लेकिन ठेके से संबद्ध सभी सूचनाएँ (वित्तीय सूचनाएँ भी) विद्यालय प्रांगण में प्रदर्शन हेतु उपलब्ध करायी जानी चाहिए। निदेशालय का काम सिर्फ सूचनाएँ एकत्र करने तथा परिणाम पर नजर रखने तक सीमित कर देना चाहिए।

उपर्युक्त सुझावों पर अमल करने का समय आ चुका है। शिक्षा और साक्षरता का स्तर ऊँचा उठाने के लिए ऐसा करना जरूरी हो गया है।

शोध- नवीन मांडवा

5. पर्यावरण

समुदाय और बाजार प्रबंधन की ओर

पर्यावरण को साफ-सुथरा, स्वच्छ तथा स्वास्थ्य के अनुकूल रखना सरकार की एक प्रमुख चिंता है।

दिल्ली में पर्यावरण की निगरानी और संरक्षण तथा इस संबंध में जागरूकता फैलाने का कार्य पर्यावरण विभाग के जिम्मे है। पर्यावरण में हो रहे किसी भी बदलाव पर नजर रखने तथा पर्यावरण संरक्षण संबंधी विभिन्न कानूनों को लागू करने की जिम्मेदारी दिल्ली प्रदूषण नियंत्रण समिति की है।

नौवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान पर्यावरण विभाग को 585 लाख रु. आवंटित किये गये थे, जिसमें से वह सिर्फ 562.25 लाख रु. ही खर्च कर पायी। इस दौरान दिल्ली प्रदूषण नियंत्रण समिति को 600 लाख रु. मिले थे, जबकि उसका कुल खर्च था, 798.43 लाख रु.। कूड़ा फैलाने के विरुद्ध (एंटी-लिटरिंग), प्लास्टिक थैली के विरुद्ध (एंटी-प्लास्टिक), पटाखों के विरुद्ध (एंटी-फायर क्रैकर्स) और यमुना की सफाई (क्लीन यमुना) अभियान इस विभाग के कुछ महत्तवपूर्ण अभियान थे।

दिसंबर 2002 तक विभिन्न सरकारी तथा गैरसरकारी विद्यालयों और 67 महाविद्यालयों में 1,161 ईको क्लब स्थापित किये गए।

अगर हम पर्यावरण विभाग तथा संबंधित एजेंसियों की कार्यप्रणालियों पर नजर दौड़ाएं तो देखेंगे कि कभी-कभी किसी योजना के लिए जितनी राशि आवंटित की गई थी, उससे कई गुना ज्यादा खर्च

हो गई। दूसरी ओर, किसी अन्य योजना के लिए आवंटित राशि का पाँचवाँ हिस्सा भी खर्च नहीं हो पाया। यह भी देखा जाता है कि अधिकांश पैसा साल के आखिरी माह में खर्च होता है।

दिल्ली सरकार के पर्यावरण विभाग की उपर्युक्त खामियों को देखते हुए आसानी से समझा जा सकता है कि सरकार के अन्य विभागों की भाँति इस विभाग में भी घोर अव्यवस्था छायी हुई है। इस संबंध में सुधार के निम्न सुझावों पर गौर किया जा सकता है। ये दिल्ली को ध्यान में रख कर तैयार किये गए हैं, पर ये देश के दूसरे राज्यों में भी पर्यावरण संबंधी चिंता से निपटने में कारगर साबित हो सकते हैं।

सुधार के सुझाव

1. नियमों के अनुपालन संबंधी निगरानी (Compliance Monitoring) और परिवेश की निगरानी (Ambient Monitoring) दोनों कार्य अभी दिल्ली प्रदूषण नियंत्रण समिति द्वारा किये जाते हैं। इन दोनों कार्यों को विशेष हित तथा भ्रष्टाचार के स्रोत के बीच संभावित टकराव दूर करने के उद्देश्य से अलग किया जाना चाहिए।
2. दिल्ली प्रदूषण नियंत्रण समिति के लिए अपने विनियामक कार्यों (उद्योगों से विभिन्न मानदंडों का अनुपालन करवाना) के नतीजों को सार्वजनिक करना जरूरी होना चाहिए। साथ ही स्वीकृति निर्णय पत्रों (Consent Decrees), पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन योजनाओं (Environmental Impact Assessment Plans) तथा पर्यावरणीय प्रबंधन योजनाओं (Environmental Management Plans) को भी सार्वजनिक किया जाना चाहिए, ताकि सरकारी निर्णयों के आधार की

सार्वजनिक रूप से समीक्षा की जा सके।

3. "प्रदूषण फैलाने पर शुल्क" सिद्धांत को लागू करना चाहिए। इसके तहत नियमों का उल्लंघन करने वालों पर अर्थदंड लगाने की प्रणाली का विकास करना चाहिए। औद्योगिक क्षेत्रों के अंतर्गत स्वीकृति के लिए साझा अपशिष्ट प्रसंस्करण संयंत्र (Common Effluent Treatment Plants) को जिम्मेदार बनाया जाना चाहिए।
4. वाहनों से होने वाले प्रदूषण के संदर्भ में मूल्य निर्धारित करने वाली व्यवस्था (जैसे, उत्सर्जन कर) का विकास होना चाहिए- नये वाहनों के प्रथम पाँच वर्षों के कर के लिए एकमुश्त राशि निर्धारित की जा सकती है। तत्पश्चात् हर वर्ष उस विशेष वाहन के उत्सर्जन स्तर के आधार पर उसका कर निर्धारित किया जा सकता है। साथ ही अधिक उत्सर्जन पर तत्क्षण शुल्क की भी व्यवस्था होनी चाहिए।
5. औद्योगिक परमिट प्रदान करने के लिए सम्मति समिति (Consent Committees) का गठन, जिसमें सामुदायिक नेताओं, गैर सरकारी संगठनों तथा अन्य पक्षों को शामिल किया जाना चाहिए। इससे न सिर्फ प्रक्रिया में पारदर्शिता आएगी, बल्कि उद्योगों और विकास कार्यों से सीधे तौर पर प्रभावित होने वाले लोगों द्वारा सामुदायिक हित के अनुरूप निर्णय भी लिये जा सकेंगे।
6. शहरी ठोस कचरा प्रबंधन के तीन तत्तवों- *घरों से संग्रह और सड़कों की सफाई, कचरों को बड़े पैमाने पर एक जगह से दूसरे जगह ले जाना तथा निर्धारित स्थानों पर कूड़े को फेंकना* में निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहित कर शहरी पर्यावरण का

बेहतर प्रबंधन किया जा सकता है।

7. राज्य अथवा राष्ट्रस्तरीय एजेंसियों के द्वारा केन्द्रीकृत निगरानी निष्प्रभावी है। वे पर्यवेक्षक की भूमिका निभा सकते हैं। परंतु परिवेश की निगरानी और नियमों के अनुपालन से संबंधित निगरानी व्यवस्था का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए। सम्मति समिति, साझा अपशिष्ट प्रसंस्करण संयंत्र सहित औद्योगिक क्षेत्र संगठन और गैर सरकारी संगठन विकेन्द्रीकृत निगरानी में शामिल हो सकते हैं।

शोध- विदिशा मैत्रा और अनुप्रिया सिंघल

6. स्वास्थ्य

कठोर जवाबदेही, अपकृत्य और 'झोला-छाप चिकित्सकों को वैधानिकता

दिल्ली के उदाहरण से देश भर की चिकित्सा व्यवस्था का हाल समझा जा सकता है :

"दिल्ली सरकार अपने बजट का 7.6 प्रतिशत हिस्सा चिकित्सा पर खर्च करती है। यहाँ के अस्पताल में प्रति 1000 व्यक्ति 2.2 बिस्तर की व्यवस्था है। जबकि विश्व स्वास्थ्य संगठन ने प्रति 1000 व्यक्ति पाँच बिस्तर का मानक तय किया है। वर्ष 2001 में 598 व्यक्ति पर एक डॉक्टर की व्यवस्था थी। दिल्ली में भोज्य पदार्थों की डेढ़ लाख (पंजीकृत) दुकानों का निरीक्षण करने के लिए सिर्फ अट्ठाइस निरीक्षक नियुक्त हैं। खाद्य अपमिश्रण निवारण विभाग के अनुसार अगर एक निरीक्षक एक दिन में एक दुकान का निरीक्षण कर ले, तो किसी भी दुकान में अगला निरीक्षण सत्रह वर्ष बाद ही संभव हो सकेगा। एक अनुमान के अनुसार लगभग चार लाख दुकानें तो बिना लाइसेंस के ही चल रहीं हैं। और 1960 से अब तक निरीक्षकों की संख्या अट्ठाइस पर ही स्थिर है। 1994-1999 के पाँच वर्षों के कालखंड में खाद्य अपमिश्रण निवारण विभाग ने 4,485 नमूने इकट्ठा किये। इसमें से 607 यानी 13.5 फीसदी में मिलावट पायी गई। विभाग ने 557 के विरुद्ध कार्रवाई की और 467 मामलों का निपटारा किया। इनमें 44 फीसदी मामलों में दोष सिद्ध हुआ। 29 फीसदी को बरी कर दिया गया। पाँच वर्षों में निरीक्षकों ने सिर्फ 0.6 फीसदी दुकानों का ही निरीक्षण किया।"

यह है दिल्ली सरकार द्वारा स्वास्थ्य के मोर्चे पर हासिल की गई उपलब्धियों का ब्यौरा। जब देश की राजधानी की यह स्थिति है, तो अन्य राज्यों की स्थिति की कल्पना सहज ही की जा सकती है। स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं के बेहतर समाधान हेतु सुधार के निम्नलिखित सुझावों पर गौर किया जा सकता है। ये दिल्ली ही नहीं देश के दूसरे राज्यों की परिस्थितियों में भी समान रूप से व्यावहारिक हैं।

सुधार के सुझाव

1. उपभोक्ता अदालतों की संख्या बढ़ाइए, जहाँ अस्पताल और चिकित्सकों की गलतियों पर रोगी वैधानिक उपचार प्राप्त कर सके। दवा निर्माताओं के साथ थोक विक्रेताओं और खुदरा विक्रेताओं को भी जबावदेह बनाया जाना चाहिए।
2. खाद्य अपमिश्रण निवारण विभाग और औषधि नियंत्रण विभाग इन अपराधों को फौजदारी अपराध के रूप में देखते हैं, जहाँ साधारण आशंका की अपेक्षा अधिक ठोस प्रमाणों की जरूरत होती है। इन अपराधों की सर्वप्रथम अपकृत्य प्रणाली (Tort System) के तहत दीवानी अपराध के रूप में सुनवाई होनी चाहिए। जिसमें अपेक्षाकृत कम शक्तिशाली साक्ष्यों, साक्ष्यों के बाहुल्य (Preponderance of evidence) की जरूरत होती है। फौजदारी मुकदमा की अपेक्षा वित्तीय जवाबदेही इन अपराधों को रोकने में अधिक कारगर साबित होगी। अर्थ दंड से भुक्तभोगी को मुआवजा भी मिलेगा, जो उसे फौजदारी मुकदमे में नहीं मिल पाता।
3. भारतीय मानक ब्यूरो ने अब गैर सरकारी संगठनों और

प्रयोगशालाओं को भी उत्पादों की जाँच करने का अधिकार दिया है कि वे तत्संबंधी मानक से मेल खाते हैं अथवा नहीं। नागरिक निरीक्षक पुरस्कार प्रणाली की स्थापना कीजिए, ताकि नागरिकों द्वारा दी गई सूचनाओं तथा नमूनों पर दोष साबित होने पर उन्हें पुरस्कृत किया जा सके। दी गई सूचना की गुणवत्ता के आधार पर सूचक को अर्थ दंड से प्राप्त राशि का पंद्रह से पचीस प्रतिशत अंश प्रदान किया जा सकता है।

4. खाद्य अपमिश्रण निवारण विभाग तथा औषधि नियंत्रण विभाग को चाहिए कि वे नमूनों की जाँच करने का ठेका गैरसरकारी संगठनों तथा मान्यताप्राप्त प्रयोगशालाओं को दे दें। इससे नगर में साधन संपन्न प्रयोगशालाओं के विकास का मार्ग प्रशस्त होगा।
5. चिकित्सकों की आपूर्ति बढ़ाइए। इसके लिए एक नयी व्यवस्था का विकास कर दो वर्ष का प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके स्नातकों को साधारण रोगों की चिकित्सा की अनुमति दी जा सकती है। इन्हें *जन चिकित्साकर्मी* कहा जा सकता है। भारत में 90 प्रतिशत से अधिक मामले जल जनित रोगों के होते हैं, जिनमें कुछ खास दवाएँ ही अलग-अलग संयोजनों में प्रयोग की जाती हैं। इन रोगों से लड़ने के लिए एक छोटा परंतु कड़ा प्रशिक्षण ही काफी है। अवैध झोला छाप चिकित्सकों को भी इस नवीन प्रशिक्षण व्यवस्था में शामिल किया जा सकता है। उन पर प्रतिबंध लगाने मात्र से ही समस्या का समाधान नहीं हो सकता।
6. दिल्ली चिकित्सा परिषद को एक 24 घंटे की हेल्पलाइन शुरू करनी चाहिए, जहाँ चिकित्सकों और अस्पताल के संबंध में

उपभोक्ताओं की शिकायतें दर्ज की जाती हों। अस्पताल और चिकित्सकों के नाम से वर्गीकृत कर इन सूचनाओं को तत्क्षण इस चेतावनी के साथ वेबसाइट पर रखा जाना चाहिए कि यह प्राथमिक सूचना है तथा इस संबंध में जाँच विचाराधीन है। अगर परिषद कठोर कार्रवाई करते हुए दोषी का लाइसेंस छीन लेती है, तो झोला छाप चिकित्सकों के विरुद्ध उसका अभियान अधिक विश्वसनीय होगा। दिल्ली चिकित्सा परिषद अपने सदस्यों के लिए निरंतर शिक्षा कार्यक्रम में भाग लेने तथा हर तीन साल पर लाइसेंस का नवीनीकरण कराने का नियम लागू कर सकती है।

7. औषधि निरीक्षकों की संख्या चाहे कितनी भी क्यों न बढ़ा दी जाए, उससे नकली दवाओं की समस्या खत्म नहीं की जा सकती है। कोई भी दवा निर्माता कंपनी ऐसी किसी जाँच अथवा कार्रवाई में सहयोग करने को कतई इच्छुक नहीं होती, क्योंकि उनकी दवा की नकल होने के बारे में कोई भी समाचार बाजार में अथवा उपभोक्ताओं के बीच उसकी विश्वसनीयता समाप्त कर सकता है। यदि बिना नकली दवा का नाम उजागर किये नकलचियों के विरुद्ध कार्रवाई करने की सुविधा दी जाए, तो कंपनियों को उनका अपना समन्वित जाँच और कार्यदल गठित करने के लिए उत्साहित किया जा सकता है। अपकृत्य प्रणाली के तहत कंपनी सफल मामलों में हुए अपने खर्चे वापस निकालने के लिए अर्थ दंड लगा सकती है। इसके अलावा पकड़ी गई नकली दवाओं के अनुपात के हिसाब से उसकी असली दवा निर्माता कंपनी कार्यदल का खर्च वहन करने को सहमत हो सकती है। जिस कंपनी की

दवा की सर्वाधिक मात्रा में नकल की जा रही हो, वह दल पर सबसे अधिक खर्च करेगी।

8. झूठा दावा अधिनियम (False Claims Act) किसी को भी सरकार को सामान अथवा सेवा की आपूर्ति करने वाले ऐसे आपूर्तिकर्त्ताओं के बारे में सूचना देने अथवा मुकदमा दायर करने का अधिकार देगा, जो अपने सामानों अथवा सेवाओं की गुणवत्ता, मात्रा अथवा कीमत के संबंध में गलत दावा पेश करते हैं। निजी आपूर्तिकर्त्ता सरकार को धोखा देने से डरेंगे, क्योंकि कोई भी यहाँ तक कि उनके अपने कर्मचारी भी पुरस्कार के रूप में एक बड़ी राशि प्राप्त करने के लिए उनके विरुद्ध प्रमाण प्रस्तुत कर सकते हैं। निजी अथवा सरकारी कर्मचारियों के लिए झूठा दावा अधिनियम तथा सूचक-सुरक्षा कानून सरकारी खरीद तथा ठेकों में भ्रष्टाचार अथवा धोखाधड़ी की संभावना को काफी हद तक कम करेगा।
9. सभी निविदाओं और प्रस्तुत तथा चयनित बोलियों को खरीद के विवरणों के साथ विभाग और अस्पताल के वेबसाइट पर डालकर दवा और अन्य उपकरणों की खरीद की प्रक्रिया को पारदर्शी बनाया जाए।
10. अस्पतालों में गैर विशेषज्ञता वाली सेवाओं (सफाई, सुरक्षा, कैंटीन का प्रबंधन और 24 घंटे फार्मेसी) को बेहतर और किफायती बनाने के लिए उसे दूसरे लोगों को ठेके पर दिया जा सकता है।
11. वरिष्ठ चिकित्सकों की जगह 'अस्पताल प्रबंधन' (Hospital Management) विधा में प्रशिक्षित लोगों को अस्पताल का प्रधान नियुक्त किया जाना चाहिए।

12. अति विशिष्टतायुक्त अस्पतालों (Super speciality hospitals) में भीड़ कम करने के लिए प्राथमिक चिकित्सा केंद्रों की गुणवत्ता और संख्या बढ़ाई जानी चाहिए।

13. खाद्य मिलावट सुरक्षा विभाग और औषधि नियंत्रण विभाग को नये प्रस्तावित उपभोक्ता सुरक्षा विभाग में समाहित कर दिया जाना चाहिए। इसमें माप एवं तौल विभाग तथा जन वितरण प्रणाली को छोड़ कर शेष खाद्य और नागरिक आपूर्ति विभाग को भी समाहित कर दिया जाना चाहिए।

शोध- श्रुतिजित के के

7. विद्युत

निजीकरण से प्रतिस्पर्धा की ओर

पिछले वर्षों में दिल्ली में विद्युत क्षेत्र कार्यकुशलता के मामले में पिछड़ता ही जा रहा था। बिजली विभाग का घाटा बढ़ता ही जा रहा था। बड़े पैमाने पर बिजली की चोरी हो रही थी। दिल्ली के विद्युत उत्पादन संयंत्र पुराने हो चुके थे, जो मांग के अनुरूप आपूर्ति कर पाने में सक्षम नहीं थे। यही नहीं, पुराने अत्यधिक ईंधन खाने वाले संयंत्रों के कारण उत्पादन की लागत भी बढ़ती जा रही थी। सन् 2000 तक आते-आते कुल उपलब्ध विद्युत उत्पादन का चालीस से पचास प्रतिशत हिस्सा चोरी-चपाटी या अन्य कारणों से बर्बाद होने लगा। अर्थात् कुल खपत बिजली के आधे हिस्से की ही शुल्क की वसूली संभव रह गई। इन्हीं कारणों से विद्युत क्षेत्र में सुधार की जरूरत महसूस हुई। जनवरी 2001 में दिल्ली विद्युत बोर्ड का निजीकरण करते हुए उसे छह अलग-अलग भागों में विभक्त कर दिया गया। एक 'होल्डिंग कंपनी', एक 'जेनरेशन कंपनी', एक 'ट्रांसमिशन कंपनी' और तीन वितरण कंपनियाँ। दिल्ली विद्युत बोर्ड के निजीकरण के बाद 'दिल्ली इलेक्ट्रिसिटी रेगुलेटरी कमीशन' को 'रेगुलेटरी बॉडी' का दर्जा दिया गया।

पर निजीकरण का यह फैसला आलोचना से परे नहीं है। इस निजीकरण से क्या हासिल हुआ? जहाँ प्रतिस्पर्धी बोली होनी चाहिए, वहाँ द्विपक्षीय समझौता हुआ। बोली लगाने वाले को कई छूट और सुविधाएँ प्रदान की गईं, जिसका बोझ अंततः करदाताओं के कंधे पर ही पड़ेगा। वितरण कंपनियों के बीच प्रतिस्पर्धा बढ़ाने की जगह निजीकरण ने

निजी वितरण कंपनियों का एकाधिकार स्थापित कर दिया। ज्ञात हो कि सरकार द्वारा नियुक्त एक समूह ने सिफारिश की थी कि मूल्य में कमी करने का सिर्फ एक ही तरीका है। और वह है प्रतिस्पर्धा पैदा करना। उनके अनुसार मुंबई में बिजली की कम कीमत का कारण यह है कि एक ही बाजार के कुछ हिस्सों में दो अलग-अलग कंपनियाँ बिजली की आपूर्ति करती हैं।

इस तरह से विद्युत क्षेत्र में सुधार की प्रक्रिया को थोड़ा और आगे बढ़ाने की जरूरत है। सुधार के कुछ सुझाव निम्न प्रकार हैं। इसे दिल्ली ही नहीं बल्कि देश के किसी भी भाग में लागू कर जनहित में परिणाम हासिल किया जा सकता है।

सुधार के सुझाव

निजीकरण तो विद्युत बाजार में प्रतिस्पर्धा बढ़ाने की ओर मात्र पहला कदम है। वास्तविक प्रतिस्पर्धा तो तब उत्पन्न होगी, जब बाजार में विद्युत सेवा प्रदाता के कई विकल्प मौजूद होंगे और हर विद्युत उपभोक्ता को अपने लिए उपयुक्त विद्युत सेवा प्रदाता का चुनाव करने की सुविधा मिले, जो कि दिल्ली के उपभोक्ताओं को फिलहाल नसीब नहीं। यद्यपि घर-घर तक विद्युत आपूर्ति का विकेन्द्रीकरण करना तो कठिन (हालाँकि असंभव नहीं) है। तथापि शुरुआती तौर पर वार्ड स्तर पर विद्युत उपयोग का विकेन्द्रीकरण तो किया ही जा सकता है। वार्ड स्तर पर विद्युत उपभोक्ता संगठन निजी कंपनियों को विद्युत आपूर्ति का ठेका देने की जिम्मेदारी ले सकते हैं। प्रत्येक वार्ड की विद्युत प्रदाता कंपनियों के बीच की प्रतिस्पर्धा से जहाँ एक ओर दर में गिरावट आएगी, वहीं आपूर्ति का

स्तर भी बेहतर होगा।

केन्द्रीय विद्युत अधिनियम, 2003 का प्रावधान ऊर्जा क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा के विकास के लिए आधारभूत विधायी और संवैधानिक ढाँचा उपलब्ध कराता है। इस अधिनियम के मुख्य बिन्दु इस प्रकार हैं :

—पुराने 3 अधिनियमों को एक केन्द्रीय अधिनियम में समाहित करना। ये तीन अधिनियम थे: भारतीय विद्युत अधिनियम, 1910; विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948; और विद्युत विनियामक आयोग अधिनियम, 1998।

—निजी संगठनों के लिए विद्युत प्रेषण और आपूर्ति सेवा का द्वार खोलकर विद्युत के मुक्त प्रवाह के समक्ष आने वाली सभी बाधाओं को हटाना।

—विद्युत संयंत्रों को लाइसेंस और तकनीकी-आर्थिक मामलों पर स्वीकृति लेने की बाध्यता से मुक्त करना।

—इस व्यवसाय की एक अलग गतिविधि के रूप में पहचान स्थापित कर खुले बाजार के माहौल में प्रवेश करने में मदद करना।

—राज्य तथा केन्द्रीय विद्युत नियामक आयोग के आदेशों के विरुद्ध अपील की सुनवाई हेतु एक विशेषज्ञ अपीलीय न्यायाधिकरण का गठन करना।

—सभी नियामक और लाइसेंस के कार्यों को केन्द्रीय तथा राज्य नियामक आयोग को हस्तांतरित करना।

—विशेष परिस्थितियों में दरों का नियमन समाप्त करना। उदाहरण के तौर पर, उपभोक्ता और उत्पादन कंपनी के बीच

समझौते के मामले में।

—राष्ट्रीय विद्युत नीति और राष्ट्रीय दर नीति के माध्यम से व्यापक निर्देश देने के बाद सरकार का विद्युत क्षेत्र के कार्यकलाप से दूर हो जाना।

—पुनर्गठन तथा निगमीकरण और निजीकरण की राह में आगे बढ़ने की स्वतंत्रता (पर बाध्यता नहीं) के साथ शेष राज्य विद्युत परिषद का राज्य प्रेषण सुविधा (State Transmission Utilities) तथा डीम्ड लाइसेंसी में परिवर्तन।

राज्य की भूमिका विद्युत क्षेत्र के नियमन और गरीब उपभोक्ताओं को आर्थिक सहायता सीधे उनके हाथ में उपलब्ध कराने तक सीमित कर दी जानी चाहिए।

शोध- माइकेल स्टैमिंगर और विदिशा मैत्रा

8. परिवहन

कानूनों से मुक्ति तथा पड़ाव अधिकार

परिवहन विभाग सार्वजनिक परिवहन व प्रदूषण से संबंधित नीतियों तथा विभिन्न योजनाओं को लागू करती है तथा आवश्यक निगरानी का कार्य करती है। जहाँ तक सड़क यातायात का सवाल है, प्रदूषण नियंत्रण की दृष्टि से दिल्ली में प्रत्येक वाहन के लिए फिटनेस प्रमाणपत्र लेना आवश्यक है, पर मार्च, 2001 में बयालिस हजार व्यावसायिक वाहन और लगभग आठ लाख निजी वाहन बिना फिटनेस प्रमाणपत्र के चल रहे थे। सन् 2001 में कैग (CAG) ऑडिट में पाया गया कि दुर्घटनाग्रस्त वाहनों को हटाने के उद्देश्य से खरीदे गये लगभग बीस लाख रुपये के दो क्रेन बेकार पड़े हैं और हताहतों को चिकित्सा सहायता पहुँचाने हेतु छः लाख तीस हजार रुपये में खरीदे गये एंबुलेंस का स्टाफ कार के रूप में उपयोग किया जा रहा है। दूसरी ओर दिल्ली परिवहन निगम को प्रति माह पचीस करोड़ रुपये का नुकसान हो रहा है। ज्ञात हो कि दि.प.नि. अपनी प्रत्येक बस पर बारह कर्मचारियों को लगाता है, जबकि जबरदस्त मुनाफा कमाने वाले निजी वाहनों में प्रत्येक बस पर सिर्फ छह कर्मचारियों को नियुक्त किया जाता है।

इस प्रकार राज्य सरकार प्रायोजित परिवहन व्यवस्था घोर कुप्रबंधन की शिकार है। परिवहन से संबंधित सभी मुद्दों, जैसे- प्रदूषण नियंत्रण, यात्री सुरक्षा और सेवा, किराया, सड़क-जाम, आदि के मामले में सुधार हेतु निम्नलिखित क्रांतिकारी कदम उठाये जा सकते हैं। दिल्ली ही नहीं संपूर्ण देश की परिवहन समस्याओं के समाधान हेतु इन उपायों

को अमल में लाया जा सकता है।

सुधार के सुझाव

अनावश्यक कानूनों के खात्मे के साथ उदारीकृत परिवहन क्षेत्र की सुव्यवस्था हेतु पड़ाव (Kerb) अधिकार, दि.प.नि. का निजीकरण और 'प्रदूषण फैलाने पर शुल्क' के सिध्दांत का क्रियान्वयन सबसे महत्तवपूर्ण सुधार है।

अनावश्यक कानूनों से मुक्ति तथा पड़ाव अधिकार

1. मुक्त बाजार में परिवहन व्यवसाय में प्रवेश करने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए और परिवहन विभाग को सिर्फ एक पंजीकरण अधिकारी के रूप में ही काम करना चाहिए। आज निजी परिवहन व्यवसायियों को कानूनी, तकनीकी और आर्थिक बाध्यताओं का सामना करना पड़ता है, जिनसे इस व्यवसाय में उनके प्रवेश में बाधा उपस्थित होती है। सभी संचालकों के लिए राज्य परिवहन प्राधिकरण 'मार्ग तथा सेवा शुल्क' निर्धारित करता है, जबकि उसे सिर्फ इतना ही सुनिश्चित करना चाहिए कि परिवहन सेवा प्रदाता के पास चालकों का वैध लाइसेंस हो, वाहनों का पंजीकरण तथा बीमा किया जा चुका हो और एक सामयिक अंतरालों पर वाहनों की सुरक्षा जाँच की जाती हो। प्रवेश संबंधी वर्जनाओं को समाप्त करने पर संचालकों के लिए उन सड़कों पर छोटी बसें उतारनी संभव हो जाएंगी, जहाँ मांग कम है अथवा जहाँ पहले कोई परिवहन सेवा नहीं

थी।

2. सभी निजी बसों के लिए एक जैसे रंग की अनिवार्यता समाप्त कर दी जानी चाहिए, ताकि निजी बस सेवाओं की ब्रांड छवि उभर सके।
3. 'संपत्ति का अधिकार' का आधार मिलने पर हम परिवहन व्यवसाय से भी व्यवसायिक चिह्नों, ब्राण्ड नामों और विभिन्न संगठनों की विशिष्ट पहचानों के निर्माण की आशा कर सकते हैं। ये सामान्य बाजार-संस्थाएँ ही हैं, जो गुणवत्ता और विश्वसनीयता बरकरार रखतीं हैं।' (क्लाइन और अन्य 1997)

जन परिवहन की मांग सभी जगह एक समान *नहीं* है: अगर विशेष उपभोक्ता आराम, सफाई, समयपरायणता तथा मनोरंजन के लिए अधिक खर्च करने के लिए तैयार है, तो इन आधारों पर सेवा प्रदाताओं को अलग-अलग श्रेणी के मूल्य रखने की छूट मिलनी चाहिए। इसका एक उदाहरण है दिल्ली में चलने वाली (विशेषकर कार्यालय जाने के वक्त) विभिन्न चार्टर्ड बसें। राज्य परिवहन प्राधिकरण ने ऐसे 'कॉण्ट्रैक्ट वाहनों' पर कई कानूनी बंधन लगा रखे हैं। उदाहरणस्वरूप सभी चार्टर्ड बसों के चालकों के पास बस में सफर कर रहे सभी यात्रियों की सूची होनी चाहिए तथा वे निर्धारित पड़ावों पर ही यात्रियों को चढ़ा सकते हैं।

4. नगर बस सेवाओं में ब्रांड छवि के विकास को बढ़ावा देने के लिए 'बसों की न्यूनतम आवश्यक संख्या' का निर्धारण किया जा सकता है। मान लिया जाए कि यह न्यूनतम संख्या 25 होगी, तो बस संचालकों को कम से कम 25 बसें संचालित

करनी होंगी। जिनके पास कम बसें होंगीं, वे आपस में मिलकर एक कंपनी अथवा सहकारी समिति बना सकते हैं। अन्य चीजों के साथ ही यह कंपनियों को ब्रांड पहचान के निर्माण और साख में निवेश करने के लिए प्रोत्साहित करेगा और व्यावसायिक गतिविधियों को बड़े पैमाने पर संचालित करने का माहौल तैयार करेगा तथा विभिन्न बस मार्गों पर सेवाओं के बीच सामंजस्य बढ़ाएगा।

5. विभिन्न निजी परिवहन संचालकों की बसों के बीच सड़क पर होड़ करने की समस्या को पड़ाव अधिकार प्रणाली से खत्म किया जा सकता है। सरकार सड़क पर ऐसे स्थानों को चिह्नित कर सकती है, जहाँ यात्रीगण बसों की प्रतीक्षा कर सकें। तत्पश्चात पड़ाव क्षेत्र निजी समूहों को नीलाम कर दीर्घकालीन पट्टे पर दिए जा सकते हैं। पड़ाव अधिकार स्वामी उन वाहनों से शुल्क वसूलेंगे, जो उनके पड़ाव पर यात्री चढ़ाने हेतु रुकेंगे। सिर्फ वे बसें ही उन पड़ावों पर रुक सकेंगीं, जिनका उन पड़ाव अधिकार स्वामियों के साथ अनुबंध हुआ है।
6. यह बस पड़ाव के वर्तमान प्रबंधन जैसा ही है, लेकिन आज बसें सड़कों पर कहीं भी रोक दी जातीं हैं। पुलिस इस प्रवृत्ति से निपटने में नाकाम रही है। पड़ाव अधिकार स्वामी बसों को सिर्फ निर्धारित स्थानों पर ही रुकने को बाध्य करेंगे। इस प्रवृत्ति को पुलिस व्यवस्था की तुलना में निजी प्रबंधन अधिक सफलता से रोक सकता है, क्योंकि अगर यात्रियों को चढ़ाने के लिए बसें कहीं भी रोकी जाने लगीं, तो पड़ाव अधिकार

स्वामियों का आर्थिक नुकसान होगा। इस प्रकार पड़ाव अधिकार सड़क पर बसों के बीच अनुचित होड़ क़ो खत्म करेगा तथा यात्रियों के चढ़ने की जगहों पर सुव्यवस्था कायम करेगा।

7. बसों तथा बस डिपो की नीलामी कर दि.प.नि. का निजीकरण कर दिया जाना चाहिए। इससे प्राप्त राशि का कर्मचारियों के लिए स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना में उपयोग किया जा सकता है।

प्रदूषण फैलाने पर शुल्क

'प्रदूषण फैलाने पर शुल्क' के सिद्धांत को लागू किया जाना चाहिए, ताकि अर्थदंड की एक स्पष्ट और बाध्यकारी व्यवस्था बनाई जा सके। इसका एक तरीका यह हो सकता है कि वाहनों पर उत्सर्जन कर लगाया जाए। यह सभी वाहनों में प्रारंभिक पाँच वर्षों के लिए एक समान हो। तत्पश्चात् हर वर्ष पैदा होने वाले प्रदूषण के आधार पर दर में इस प्रकार वृद्धि की जानी चाहिए कि इससे वाहन की उम्र का भी पता चल सके। इस व्यवस्था में अधिक उत्सर्जन होने पर तत्क्षण जुर्माना की व्यवस्था भी जोड़ी जा सकती है।

शोध- विदिशा मैत्रा

9. समाज कल्याण विभाग

आओ बीपीएल, जाओ एपीएल

'समाज कल्याण विभाग' जरूरतमंद, समस्याग्रस्त व्यक्तियों, बुजुर्गों, बेसहारा लोगों, विकलांगों तथा उपेक्षित बच्चों के कल्याण हेतु समर्पित है। विभाग महिलाओं, बच्चों और विकलांगों को रोजगार के अवसर मुहैया कराने का भी कार्य करता है।

पर क्या 'समाज कल्याण विभाग' उपर्युक्त जिम्मेदारियों को सफलतपूर्वक निभा पा रहा है? क्या समाज कल्याण विभाग की कल्याण योजनाओं के बारे में आम आदमी को समुचित जानकारी है?

प्रस्तुत है दिल्ली सरकार के समाज कल्याण विभाग की वर्तमान स्थिति का एक जायजा:

केयर प्लस ने इस विषय पर झुग्गियों के 4,500 घरों में एक सर्वेक्षण कराया। सर्वेक्षण के अनुसार केवल 23.5 प्रतिशत लोगों को महिलाओं से संबंधित विकास योजनाओं के बारे में जानकारी थी। बाल विकास योजनाओं के बारे में तो सिर्फ 17.5 प्रतिशत लोग ही जानते थे। अध्ययन में यह भी पता लगा कि विभिन्न योजनाओं के आवेदन प्रारूप ज्यादातर स्थानीय निर्वाचित प्रतिनिधियों (विधायकों, पार्षदों) को ही मिलते हैं।

और भी कई तथ्य हैं, जो विभाग की दुर्व्यवस्था की करुण कहानी कहते हैं। आइए एक नजर डालते हैं वृद्धावस्था पेंशन योजना पर:

"सरकार द्वारा 1975 में साठ वर्ष से अधिक उम्र के लोगों के लिए वृध्दावस्था पेंशन योजना शुरू की गई थी। 1995 तक इस योजना का

लाभ उठाने के लिए सिर्फ 11,263 लोगों ने पंजीकरण कराया था। इसी साल दिल्ली के उपराज्यपाल ने एक आदेश जारी किया। जिसके अनुसार जन्म प्रमाणपत्र के लिए विधायकों अथवा सांसदों का अनुमोदन ही काफी मान लिया गया। अचानक वरिष्ठ नागरिकों की संख्या में तेजी से इजाफा होना शुरू हो गया। पंद्रह हजार नये लोग हर साल बढ़ने लगे, जो पिछले बीस सालों में पंजीकृत कुल वरिष्ठ नागरिको की संख्या से भी ज्यादा थी। कैग रिपोर्ट के अनुसार सन् 1999 तक लाभार्थियों की कुल संख्या 76,871 हो गई। उसमें से 18,312 की जाँच की गई, तो पाया गया कि 6,864 लाभार्थी (37.5 प्रतिशत) योजना के लिए निर्धारित शर्तों को पूरा नहीं कर रहे थे। जबकि उन्हें चार करोड़ रुपये दिये जा चुके थे। उपर्युक्त फर्जी लाभार्थियों में से तीस प्रतिशत कम उम्र के थे। दस प्रतिशत के जन्म प्रमाणपत्र फर्जी थे। पचास प्रतिशत लाभार्थियों की पारिवारिक आय का विवरण नहीं था। आदि-आदि। 168 मामलों में तो लाभार्थियों की मृत्यु हो चुकी थी, पर विभाग उन्हें पेंशन भेजता रहा, जबकि स्थानीय डाकघर ने विभाग को उनकी मृत्यु की सूचना पहले ही दे दी थी।"

उपर्युक्त उदाहरण से सहज ही समझा जा सकता है कि विभाग की शेष योजनाओं की क्या स्थिति होगी।

'ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल इंडिया' के दल का आरोप है कि समाज कल्याण विभाग के लोग गैरजिम्मेदार हैं। वे अपने कर्त्तव्यों से वाकिफ नहीं हैं।

उपर्युक्त परिस्थितियों को देखते हुए यहाँ भी सुधार की तीव्र जरूरत महसूस होती है।

सुधार के सुझाव

विभाग गैरसरकारी संगठनों, विधायकों व पार्षदों को प्रारूप पत्र दे देता है और उनसे संपर्क करने के बारे में समुचित विवरण उपलब्ध कराए बिना ही लोगों से अपेक्षा करता है कि वे उनसे संपर्क कर लेंगे। चूँकि स्थानीय निर्वाचित प्रतिनिधियों के माध्यम से प्रारूप पत्र का प्रावधान भ्रष्टाचार के तालाब में आकंठ डूबा हुआ है, अत: सरकार को चाहिए कि वह प्रारूप पत्र तक लोगों की पहुँच बनाने हेतु कोई अन्य व्यवस्था भी करे। गैरसरकारी संगठनों को काम सौंपने से यद्यपि गैरसरकारी संगठनों की अधिकाधिक भागीदारी का आदर्श पूरा होता है, तथापि इतने भर से ही विभाग को यह नहीं समझ लेना चाहिए कि उसका कार्य समाप्त हो गया। योजना आयोग ने ठोस विश्वसनीयता और जवाबदेही की प्रणाली स्थापित करने वाले गैरसरकारी संगठनों की पहचान सुनिश्चित करने की सिफारिश की है। योजनाओं और संस्थानों के कार्यकलापों की निगरानी और श्रेणी क्रम निर्धारण (रेटिंग) जारी करने तथा विभिन्न सिफारिशों हेतु किसी अन्य एजेंसियों या गैरसरकारी संगठनों का उपयोग किया जा सकता है। विभाग द्वारा क्रियान्वित विभिन्न योजनाओं की निगरानी और मूल्यांकन का कार्य संस्थागत आधार पर होना चाहिए और उसे सार्वजनिक रूप से छानबीन हेतु खुला रखना चाहिए। इसके अंतर्गत विभागीय कार्यालय पर नागरिक सेवाओं की स्थिति का जायजा लेने के लिए जनमत सर्वेक्षण (एग्जिट पोल) करवाया जा सकता है। सत्यापन योग्य विवरणों के साथ स्मार्ट कार्ड के प्रावधान के द्वारा लाभार्थियों को बेहतर लक्षित किया जा सकता है तथा उसकी उचित निगरानी भी की

जा सकती है। इसका अर्थ है कि विभाग के सभी व्यावसायिक संबंधों अथवा अनुबंधों में मांग के आधार पर नहीं बल्कि कर्त्तव्य के आधार पर पूर्ण वित्तीय पारदर्शिता भी पैदा करनी होगी।

सरकार की विभिन्न एजेंसियाँ अनेक योजनाएँ उपलब्ध कराती हैं। इस व्यवस्था में कुछ व्यक्ति तो अनेक योजनाओं की लक्षित सूची में आ जाते हैं, जबकि कुछ लोग किसी भी योजना की लक्षित सूची में नहीं आ पाते। अत: इन योजनाओं को पुनर्व्यवस्थित किया जाना चाहिए, जिससे ऐसा न हो कि कुछ लाभार्थी तो कई प्रकार के लाभ उठाने में सफल हो जाएँ और कुछ लोग बिल्कुल भी लाभ न उठा पाएँ। यह एक जैसी सेवाओं को एक नये विभाग 'व्यक्ति एवं परिवार कल्याण सेवा' के अधीन समायोजित करके (जैसा कि प्रारंभिक अध्याय में प्रस्तावित है) किया जा सकता है। सरकार लोगों तक पहुँचने का प्रयास करे और अपना सूचना वितरण केन्द्र आम जनता की पहुँच के भीतर स्थापित करे, तो कुछ बेहतर कर सकती है। उदाहरण के तौर पर, जिला मुख्यालय, जो पहले से ही प्रशासन का केंद्र है, वह सभी प्रकार के प्रारूप पत्रों के वितरण का केंद्र हो सकता है। सरकार अपनी वेबसाइट पर भी सारी सूचनाएँ रख सकती है। ऐसे में लोग कोई भी सूचना, जैसे कि किसी विशिष्ट योजना से कौन-कौन लोग लाभ उठा रहे हैं, आदि, आसानी से हासिल कर सकेंगे। योजनाओं को समाचार पत्रों और पर्चों में प्रकाशित कर देने मात्र से और शिक्षितों पर यह भरोसा करने से कि वह अशिक्षितों को बता देगे, काम नहीं चलेगा। इसकी जगह योजनाओं के प्रचार-प्रसार के कुछ नवीन तरीकों को आजमाया जाना चाहिए। उदाहरणस्वरूप लाउडस्पीकर के द्वारा घोषणा कर योजनाओं के बारे में

बताया जा सकता है, जैसा कि राजनीतिक प्रचार कार्य में किया जाता है।

योजनाओं के बारे में सूचना देने के अलावा तत्संबंधी जरूरी दस्तावेज हासिल करने की प्रक्रिया के बारे में भी आवश्यक जानकारी उपलब्ध करायी जानी चाहिए। सरकार को विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के तहत तैयार की गई योजनाओं में कुछ हद तक निरंतरता अथवा परस्पर संबंध बरकरार रखना चाहिए। किसी नयी एजेंसी के तत्तवावधान में नयी योजना शुरू करने की तुलना में पहले से मौजूद व्यवस्था में बदलाव या सुधार करना अधिक कारगर होता है। आम जनता के बीच सूचना का प्रसार धीरे-धीरे होता है। नयी-नयी योजनाएँ शुरू करने तथा मानदंडों में बार-बार बदलाव करने से एक ओर लोग जहाँ दिग्भ्रमित होते हैं और निराशा के शिकार होते हैं, वहीं नये कार्यक्रमों के लिए नये लोगों को प्रशिक्षित करने में सरकार को भी काफी व्यय करना पड़ता है। विभागों के द्वारा जागरूकता फैलाने के लिए कुछ खास स्थानों पर सूचना मेला आयोजित करना चाहिए, जहाँ विभागीय अधिकारीगण लोगों के सवालों का जवाब दे सकें।

यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि लाभार्थियों को वित्तीय मदद पहुँचाने वाली योजनाएँ महज छलावा भर ही होंगी, जब तक कि उन्हें जीविकोपार्जन से रोकने वाली लाइसेंसों एवं परमिटों की बेड़ियों से मुक्त न किया जाए तथा कल्याण योजनाओं पर स्थायी निर्भरता का जुआ उतार कर फेंक न दिया जाए। कल्याण का सुरक्षा जाल लोगों को निकम्मा बना सकता है।

लेकिन आज प्रचलित नगरपालिका लाइसेंस प्रणाली ने स्वरोजगार

के इच्छुक लोगों को खूब परेशान कर रखा है। ठेलेवाले, फेरीवाले और रिक्शा चालकों द्वारा रोजगार के लाखों अवसर पैदा किए जा सकते हैं, लेकिन वर्तमान कानून इन काम-धंधों को अवैध बनाता है। उपर्युक्त बातों के मद्देनजर यह जरूरी हो गया है कि हम नगरपालिका के सभी कानूनों पर पुनर्विचार करें और नयी समझ तथा सामाजिक जरूरतों के हिसाब से इन्हें फिर से गढ़ें।

आओ बीपीएल (Below Poverty Line/ गरीबी रेखा के नीचे), जाओ एपीएल (Above Poverty Line/ गरीबी रेखा के ऊपर)

पूरी दिल्ली में विभिन्न कल्याण तथा वित्तीय अनुदान योजनाओं को एक दूसरे से जोड़ कर उसे आम जनता के लिए एक ही केंद्र पर वाहक (बियरर) चेक के साथ हासिल कर पाने की व्यवस्था की जानी चाहिए। इस प्रकार आसान उपलब्धता, केंद्रित जागरूकता और मध्य स्तर की नौकरशाही के खत्म होने के कारण प्रति व्यक्ति अधिक प्रावधान की व्यवस्था होगी।

इसके साथ-साथ वित्तीय पारदर्शिता की भी जरूरत है। इसका अर्थ है कि यह स्पष्ट पता लगना चाहिए कि कोष की स्थिति क्या है और अभी राशि किन तक पहुँची है।

शोध- नवीन मांडवा, नूपुर अग्रवाल और ज्योत्स्ना सिंह

10. खाद्य और नागरिक आपूर्ति विभाग

राशन से 'खाद्य पर्चा' की ओर

दिल्ली में खाद्य और नागरिक आपूर्ति विभाग आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति बनाए रखने व समुचित मूल्य पर उनका न्यायपूर्ण वितरण सुनिश्चित करने हेतु जन वितरण प्रणाली का संचालन करता है।

पहले जन वितरण प्रणाली के माध्यम से कई सामान जैसे आयोडीन नमक, आरबीडी पाम आयल, पनघट घी और कपड़े बेचे जा चुके हैं। पर आज जन वितरण प्रणाली सिर्फ गेहूँ, चावल, चीनी और मिट्टी के तेल तक ही सिमट चुकी है। 31 मार्च, 2002 तक विभाग के द्वारा कुल 37,55,694 'खाद्य पर्चे' जारी किये जा चुके थे। इस समय तक दिल्ली में कुल 3,172 उचित दर दुकानें चल रहीं थीं। नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) में खाद्य और नागरिक आपूर्ति विभाग को कुल नौ करोड़ रुपये आवंटित किये गए थे। जबकि उसका कुल खर्च 11.05 करोड़ रु. का था। अंत्योदय अन्न योजना और अन्नपूर्णा योजना इस विभाग की अन्य मुख्य योजनाएँ हैं। विभाग कई कल्याणकारी संस्थाओं को गरीबी रेखा के नीचे वाली दर पर अन्न मुहैया कराती है। विभाग के अंतर्गत उपभोक्ता मामलों की देख-रेख के लिए एक निदेशालय भी कार्य कर रहा है। इसके अंतर्गत राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में एक राज्य आयोग तथा नौ जिला उपभोक्ता अदालत कार्य कर रहीं हैं। उपभोक्ता अधिकार से संबंधित मामलों पर जागरूकता के लिए विभाग विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं को कोष भी उपलब्ध कराता है।

इस प्रकार खाद्य और नागरिक आपूर्ति विभाग के माध्यम से जन

कल्याण के सपने का एक सुंदर महल तैयार किया गया है। पर जमीनी हकीकत क्या है उसकी भी एक झलक जरूरी है। सूचना का अधिकार अधिनियम की सफलता की जाँच करने के क्रम में पाया गया कि दिल्ली के ही एक क्षेत्र में बड़ी संख्या में लोगों ने गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों के राशन कार्ड के लिए आवेदन किया था। पर काफी दिन बीत गए उन्हें कार्ड नहीं मिला। विभागीय कार्यालय के कई चक्कर लगाये गए, पर कोई संतोषजनक जवाब नहीं मिला। आखिर उन्होंने सूचना का अधिकार अधिनियम के तहत इसके संबंध में जानकारी मांगी। तब उन्हें पता चला कि उन सबके कार्ड बहुत पहले बन चुके थे, जो स्थानीय दुकानदारों के कब्जे में थे। वे उस कार्ड पर उनका राशन उठाते थे और बाजार में उसे बेचा करते थे। ऐसे और कई मामले होंगे, जिनका लोगों को पता ही नहीं होगा। क्या उपर्युक्त व्यवस्था की जगह हम जन कल्याण के किसी ऐसे विकल्प के बारे में विचार नहीं कर सकते, जिसमें ज्यादा पारदर्शिता हो तथा धांधली की कम गुंजाइश हो?

इस संबंध में निम्नलिखित सुझावों पर गौर किया जा सकता है।

सुधार के सुझाव

भारत में जन वितरण प्रणाली के साथ एक सबसे बड़ी समस्या यह है कि राज्य सरकार लक्षित जनसंख्या की पहचान करने में असमर्थ है। आपको यह जान कर आश्चर्य होगा कि बिहार में अब तक वितरित किये जा चुके राशन कार्डों की कुल संख्या वहाँ के परिवारों की कुल संख्या की दोगुनी है।

एक अनुमान के मुताबिक लक्षित जन वितरण पर खर्च हुए

प्रत्येक सौ रुपये में से सिर्फ तीन रुपये सत्तर पैसे ही गरीबों तक पहुँचते हैं (श्री पनागरिया, 2002)। फूड कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया के कार्य को निजी खुदरा दुकानों के संचालन के कार्य में परिवर्तित किया जाना चाहिए।

गरीबों को खाद्य पर्चे के माध्यम से मदद दी जा सकती है। खाद्य पर्चे को गरीबी रेखा से नीचे रहने वाला प्रत्येक परिवार निर्धारित सरकारी कार्यालय (पुस्तक की भूमिका में प्रस्तावित व्यक्ति और परिवार कल्याण विभाग) से एक निश्चित अंतराल पर नियमित रूप से हासिल कर सकता है। खाद्य पर्चा गरीबों को क्रय शक्ति प्रदान करने का एक बेहतर उपाय है। चूँकि गरीबी रेखा से नीचे के लगभग सभी परिवारों की पहचान की जा चुकी है, अत: इस पद्धति से धन सीधे गरीबों के हाथों में पहुँचाया जा सकता है। खाद्य पर्चा भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाता है, क्योंकि उससे उचित दर दुकानों के मालिकों की जगह गरीब शक्तिशाली होते हैं। (आज उचित दर दुकान के स्वामी आवंटित अनाज का एक बड़ा हिस्सा खुले बाजार में बेच आते हैं और कागजी तौर पर यह दावा करते हैं कि उन्होंने इसे गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों को बेचा है। इस प्रकार सरकारी सहायता का एक बड़ा अंश ये बिचौलिये हड़प लेते हैं।) खाद्य पर्चे से इस बीमारी का अंत होगा। क्योंकि दुकानदारों को खाद्य पर्चा भुनाने के लिए अधिकारियों के पास पर्चा जमा करने होंगे और पर्चा हासिल करने के लिए उन्हें पर्चा धारकों को अनाज देना होगा।

खाद्य पर्चे के खिलाफ प्राय: एक दलील दी जाती है कि इसे पैसों के लिए बेचा जा सकता है। लेकिन ऐसे तो गरीबी रेखा से नीचे के लोगों के लिए निर्धारित दर पर खरीदे गए अनाज को भी पैसों के लिए

बेचा जा सकता है। वस्तुत: अधिकांश गरीब परिवार 'सब्सिडी को भोजन के बदले दवाओं पर खर्च कर सकने के लचीले प्रावधान का स्वागत करेंगे'। (श्री पनागरिया, 2002)।

उपभोक्ता मामलों के निदेशालय को प्रस्तावित उपभोक्ता सुरक्षा विभाग में मिला दिया जाए, जो सभी उपभोक्ता सुरक्षा मामलों के साथ ही खाद्य अपमिश्रण निवारण, औषधि नियंत्रण और माप-तौल की निगरानी के लिए जिम्मेदार होगा।

शोध- विदिशा मैत्रा और सौम्या गुप्ता

11. कृषि विपणन बोर्ड

लाइसेंस और एकाधिकार का खात्मा

कृषि विपणन बोर्ड का निर्माण थोक बाजार उपलब्ध करा कर कृषक तथा उपभोक्ता हितों की रक्षा करने हेतु किया है। यहाँ किसान अपने उत्पाद लाइसेंसी एजेंटों को बेचते हैं। पर इन विपणन बोर्ड से सचमुच किसानों का भला हो पा रहा है या नहीं यह जानने के लिए हमें दिल्ली कृषि विपणन बोर्ड की वर्तमान स्थिति पर ध्यान देना होगा।

दिल्ली कृषि विपणन बोर्ड की स्थापना सन् 1976 में हुई थी। बोर्ड और इसकी नौ कमिटियाँ दिल्ली कृषि उत्पाद विपणन (रेगुलेशन) अधिनियम, 1998, दिल्ली अधिनियम संख्या 7, 1999 और दिल्ली कृषि उत्पाद विपणन (रेगुलेशन) सामान्य कानून, 2000 के अनुसार कार्य करती हैं। यह बोर्ड किसान हित के अपने घोषित उद्देश्य पूरे करने के लिए थोक बाजार और प्रत्येक थोक बाजार में थोक डीलरों और कमीशन एजेंटों की संख्या को नियंत्रित करता है। इसके लिए वह लाइसेंस प्रणाली का उपयोग करता है। थोक बाजार को नियंत्रित करने के लिए बोर्ड ने कुछ खास बाजारों को वैध घोषित किया है। कानूनन इन जगहों पर ही कृषि उत्पादों के थोक व्यापार किए जा सकते हैं। ये थोक बाजार सिर्फ सरकार द्वारा ही स्थापित किए जा सकते हैं। मंडी जहाँ एक ओर किसानों, व्यापारियों तथा कमीशन एजेंटों से विभिन्न प्रकार के कर, शुल्क, अर्थ-दंड, इत्यादि इकट्ठा कर बोर्ड को देती है, वहीं बोर्ड को सरकार से भी काफी कोष मिलता है। इस प्रकार बोर्ड सिर्फ किसानों से ही नहीं, बल्कि करदाताओं से भी पैसा इकट्ठा करता है।

दूसरी ओर ऐसे थोक बाजार में जहाँ उत्पाद बेचने वाले किसानों की संख्या पर तो कोई पाबंदी नहीं है, पर खरीदारों की संख्या सीमित कर दी गई है, किसानों को अपने उत्पाद का वाजिब मूल्य नहीं मिल पाता है। इसका कारण यह है कि वे कुछ सीमित खरीदारों को ही अपना उत्पाद बेचने को विवश हैं। जबकि मुक्त बाजार में, जहाँ खरीदारों की संख्या असीमित हो, वहाँ खरीदारों के बीच प्रतिस्पर्धा होने से किसानों को उनके उत्पादों के लिए अधिकाधिक कीमत हासिल होगी।

इस प्रकार ये कृषि विपणन बोर्ड आम आदमी से कर इकट्ठा कर एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण करतें हैं, जिसमें किसानों का अधिकाधिक शोषण होता है। अत: मंडी और व्यापार की ऐसी पद्धति को बदलना बहुत जरूरी है। निम्नलिखित सुझाव इस संबंध में यथोचित समाधान प्रस्तुत करते हैं, जो देश के सभी राज्यों में लागू किए जा सकते हैं।

सुधार के सुझाव

1. थोक बाजार से कृषि विपणन बोर्ड का एकाधिकार हटाइए। निजी संगठनों को प्रतिस्पर्धी बाजार खड़ा करने दीजिए। दिल्ली की आजादपुर कृषि उत्पाद विपणन समिति अकेले दि.कृ.वि.बो. को सलाना 442 लाख रु. का भुगतान करती है, जो वास्तव में किसानों के द्वारा वहन किया जाता है। अगर हम विनियमित बाजार को समाप्त कर सकें, तो बहुत बड़ी रकम किसानों के लिए बचाई जा सकती है। इस पैसे से किसान स्वयं अपना बाजार लगा सकते हैं, जो उन्हें बेहतर साधन और सुविधा मुहैया कराएगा।

2. थोक विक्रेता और कमीशन एजेंट के लिए लाइसेंसिंग प्रणाली को

समाप्त कीजिए तथा कृषि उत्पादों की खरीद में वास्तविक प्रतियोगिता पैदा कीजिए। कमीशन और भी कम हो जाएगा। कृ.वि.बो. के एकाधिकार और थोक विक्रेताओं पर पाबंदी लगाने से किसानों का शोषण होता है।

3. जो स्वयंसेवी संगठन सचमुच किसानों की मदद करना चाहते हैं, उन्हें थोक व्यापार के लिए जगह उपलब्ध कराने तथा बाजार का विकल्प तैयार करने के कार्य से शुरुआत करनी चाहिए, ताकि मुक्त और निष्पक्ष व्यापार शुरू हो सके।

शोध- देविका जोहरी और नेहा श्वेतांबरी

12. औद्योगिक सब्सिडी

गरीबों का कर अमीरों की झोली में

राज्य वित्तीय निगम अधिनियम 1951 के तहत सन् 1967 में दिल्ली वित्तीय निगम की स्थापना की गई थी। इसका उद्देश्य संघशासित क्षेत्र दिल्ली और चंडीगढ़ में लघु और मध्यम श्रेणी के उद्योगों को बढ़ावा देना, उनका विकास करना तथा वित्तीय मदद उपलब्ध कराना है।

ऐसा देखा गया है कि निगम अपने दिए ऋण का सिर्फ 40 प्रतिशत ही वसूल कर पाता है। इससे सरकार को काफी घाटा होता है। इसके साथ ही निगम के लेखा परीक्षकों का कहना है कि दिल्ली वित्तीय निगम के हिसाब-किताब की प्रणाली दोषपूर्ण है, फलत: उसके लाभ का ब्यौरा वास्तविकता से काफी दूर होता है।

कंपनी अधिनियम 1956 के तहत सन् 1971 में दिल्ली राज्य औद्योगिक विकास निगम की स्थापना एक कंपनी के रूप में की गई थी। इसकी मुख्य गतिविधियाँ हैं- औद्योगिक शेड्स का निर्माण, उद्योगों का स्थानांतरण, औद्योगिक क्षेत्रों के लिए साझा अपशिष्ट प्रसंस्करण संयंत्र तथा लघु औद्योगिक इकाइयों को विपणन सहायता उपलब्ध कराना। यह कुछ व्यावसायिक गतिविधियाँ भी चलाती हैं, जैसे- शराब की बिक्री, तकनीकी परामर्श, गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशाला, ओवरसीज मैनपावर ब्यूरो और खनन कार्य।

सरकारी प्रक्रिया और अफसरशाही के सारे दोष यहाँ भी मौजूद हैं, जिसकी वजह से करोड़ों रुपयों का चूना लगता है तथा विकास कार्य भी

अपेक्षा के अनुरूप नहीं हो पाता है। अत: उपर्युक्त दोनों विभागों में कुछ सुधार आवश्यक हैं।

अपेक्षित सुधार

1. दिल्ली वित्तीय निगमों की पिछड़े वर्गों तथा लघु और मध्यम श्रेणी के उद्योगों के लिए निर्मित सभी 'सब्सिडाइज्ड क्रेडिट योजनाओं' को भूमिका में प्रस्तावित सरकारी गतिविधियों के कार्याधारित पुनर्गठन के अनुसार सहकारी वित्त विभाग के अधीन लाया जा सकता है। इससे जहाँ कार्यसंचालन में आसानी होगी, वहीं लाभार्थीगण भी सभी योजनाओं के बारे में आसानी से पता लगा सकेंगे।
2. दिल्ली राज्य औद्योगिक विकास निगम को शराब तथा साइबर कैफे के व्यवसाय से मुक्त होना चाहिए। इन व्यवसायों के निजीकरण से सरकार को अधिक राजस्व की प्राप्ति हो सकती है।
3. साझा अपशिष्ट प्रसंस्करण संयंत्र औद्योगिक एस्टेटों के द्वारा अनिवार्यत: अपने खर्चों पर ही बनवाए जाने चाहिए। प्रदूषण फैलाने वाले को यह खर्च स्वयं ही वहन करना चाहिए।
4. औद्योगिक क्षेत्र के विकास में निजी क्षेत्र को लगाया जाना चाहिए। सरकार को खुद को नीति निर्माण तथा नियामक की भूमिका तक ही सीमित रखनी चाहिए।
5. समाज के कमजोर तबके में रोजगार के अवसर बढ़ाने के लिए दिल्ली राज्य औद्योगिक विकास निगम को सामुदायिक कार्यशाला तथा औद्योगिक शेड स्वयं बनाने की जरूरत नहीं है। ये कार्य सहकारी वित्त विभाग द्वारा प्रदत्त सब्सिडाइज्ड ऋण के आधार पर निजी संगठनों द्वारा

किये जा सकते हैं।

शोध-विदिशा मैत्रा और नेहा शर्मा

13. विधायक कोष

स्वतंत्रता और जवाबदेही

विभिन्न राज्यों के विधायकों को अपने क्षेत्र में विकास कार्य करवाने के लिए एक बड़ी राशि (दिल्ली में दो करोड़ रुपये) आवंटित की जाती है। इस राशि से विधायक कौन-सा कार्य कर सकते हैं तथा कौन-सा नहीं उसकी एक स्पष्ट सूची है। विभिन्न कार्यों हेतु खर्च की सीमा तथा कार्य की पूरी प्रक्रिया निर्धारित है। इस कोष के द्वारा सभी कार्य सरकारी एजेंसियों के द्वारा ही किये जा सकते हैं।

यद्यपि हर विधानसभा क्षेत्र में करने को बहुत कार्य हैं और कोई भी कार्य करवाने के लिए विधायक को सिर्फ पहल ही करनी होती है। तथापि देखा यह जाता है कि सामान्यत: विधायक कोष का आधा से कम हिस्सा ही विकास कार्यों पर खर्च हो पाता है।

निम्नलिखित दो तालिकाओं के माध्यम से दिल्ली के विधायक कोष तथा विभिन्न सार्वजनिक एजेंसियों को आवंटित राशि पर एक नजर डालते हैं:

तालिका 1 : विधायक कोष का समेकित विवरण (रु. लाख में)

वर्ष	कुल शेष/रिलीज	कुल खर्च	बची हुई राशि	कुल राशि के अनुसार खर्च प्रतिशत में
1999-2000	776.78	28.22	748.56	3.63
2000-2001	2,032.11	381.24	1,650.87	18.76
2001-2002	3,969.80	2,914.95	1,054.85	73.42
2002-2003	11,956.09	6,241.73	5,714.36	52.20
कुल	**18,734.78**	**9,566.14**	**9,168.64**	**48.93**

स्रोत : राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार। 2003। समेकित विधायक विवरण 2002-03। शहरी विकास विभाग।

तालिका 2 में प्रस्तुत है वर्ष 2002-03 के लिए 31 मार्च, 2003 तक प्राप्त विकास रिपोर्ट।

एजेंसी का नाम	वर्ष 2002-03 के लिए जारी कोष	पिछले वर्ष की बची हुई राशि	कुल उपलब्ध कोष	खर्च	बची हुई राशि	कुल उपलब्ध कोष का प्रतिशत खर्च
दिननि नदिननि दिजबो सिं व बा नि दिविप्रा लोनिवि स्ल व झुझों दिविबो विकं कुल	11,919.27 435.00 158.23 326.90 47.50 4.70 65.11 4.23 339.06** 13,300.00	6,778.69 261.46 246.96 72.94 - - - अ - 7,360.05	18,697.96 696.46 405.19 399.84 47.50 4.70 65.11 343.29 - 20,660.05	9,566.14 425.92 242.71 212.08 - - * 4.23 - 10,451.08	9,131.82 270.54 162.48 187.76 47.50 4.70 65.11 339.06 - 10,208.97	51.16 61.15 59.90 53.04 0.0 0.0 0.0 1.23 - 50.59

स्रोत: राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार। 2003। समेकित विधायक विवरण 2002-03। शहरी विकास विभाग।

दिननि: दिल्ली नगर निगम, नदिननि: नई दिल्ली नगर निगम, दिजबो: दिल्ली जल बोर्ड, सिं व बा नि: सिंचाई व बाढ़ नियंत्रण, दिविप्रा: दिल्ली विकास प्राधिकरण, लोनिवि: लोक निर्माण विभाग, स्ल व झु झों: स्लम व झुग्गी झोंपड़ी, दिविबो: दिल्ली विद्युत बोर्ड, विकं: वितरण कंपनी। अ: अज्ञात।

*—21 लाख रु. का कार्य स्वीकृत। 31 लाख रु. के टेंडर प्रक्रिया में हैं और 13 लाख रु. का कार्य शिक्षा विभाग से भूमि हासिल करने के बाद शुरू किया जाएगा।

**—इस कोष में शामिल हैं 223.79 लाख रु. मुंबई सबअर्बन इलेक्ट्रिसिटी सप्लाइ राजधानी पावर लि. को, 50.24 लाख रु. मुंबई सबअर्बन इलेक्ट्रिसिटी सप्लाइ यमुना पावर लि. को और 50.98 लाख रु. नॉर्थ दिल्ली पावर लि. को।

प्राय: यह देखा जाता है कि विधान सभा के पाँच वर्षों के प्रारंभिक एक या दो वर्षों में कोष की बहुत कम राशि खर्च हो पाती है। तथा अंतिम वर्ष में अपेक्षाकृत अधिक राशि खर्च होती है। आखिर ऐसा क्यों होता है? पहले के वर्षों में कम काम होने के पीछे नगर निगम तथा विभिन्न

ठेकेदारों में कई बार खूनी संघर्ष भी हो जाते हैं।

उपर्युक्त समस्याओं के समाधान के संदर्भ में निम्न सुझावों पर गौर किया जा सकता है।

सुधार के सुझाव

1. इस योजना में सभी कार्य सरकारी एजेंसियों द्वारा ही किये जाने की बाध्यता समाप्त की जानी चाहिए।
2. खुली प्रतिस्पर्धात्मक बोली में सरकारी एजेंसियाँ निजी उद्यमियों के साथ प्रतियोगिता कर सकती हैं।
3. विधायकों को टेंडर आमंत्रित करने, ठेका देने और कार्य की पूर्णता की निगरानी करने का अधिकार दिया जाना चाहिए। माहवार विकास रिपोर्ट के साथ ठेका और भुगतान के सभी विवरण विधायक की वेबसाइट पर उपलब्ध होने चाहिए।
4. शहरी विकास विभाग को सभी टेंडर सूचनाओं, प्रस्तुत बोलियों और चयनित बोलियों को वेबसाइट पर रख कर प्रक्रिया में सहयोग करना चाहिए, जो चयनित बोली के कार्य की प्रकृति, समय सारणी और भुगतान के विवरणों को स्पष्ट करेगी। शहरी विकास विभाग को कुल भुगतान के हर पाँचवें भाग के भुगतान के साथ विकास रिपोर्ट का नवीनीकरण करना चाहिए।

शोध- श्रुतिजित के के

दिल्ली का वित्तीय पूर्वानुमान (मार्क्समैनशिप)

निम्न आंकड़ों से स्पष्ट है कि सरकार का वित्तीय पूर्वानुमान ठोस आंकड़ों पर आधारित न होकर तुक्के और अंदाज पर आधारित होता है।

1. समाज कल्याण विभाग के तहत 'सफाईकर्मियों की मुक्ति के लिए ड्राय लैट्रिन का वाटर बॉर्न में परिवर्तन' की योजना के लिए 1,900 लाख रु. आवंटित किये गए थे, जबकि वास्तविक खर्च सिर्फ 71,000 रु. ही हुए।
2. स्वास्थ्य और परिवार कल्याण विभाग का 'गरीब बच्चों के लिए जन आरोग्य बीमा पॉलिसी' का वास्तविक खर्च सिर्फ 5,000 रु. हुआ। जबकि इसके लिए 1,150 लाख रु. स्वीकृत किये गए थे।
3. 'दिल्ली सरकार के स्वास्थ्य कार्यक्रमों अथवा विशिष्ट कार्यक्रमों के कार्यान्वयन और निगरानी हेतु स्थापना प्रकोष्ठ (इस्टेब्लिशमेंट सेल)' के लिए स्वास्थ्य सेवा निदेशालय के पास खर्च हेतु 150 लाख रु. स्वीकृत थे, जबकि सिर्फ 50,000 रु. ही खर्च किये गए।
4. शिक्षा विभाग द्वारा 'नये माध्यमिक विद्यालय खोलने' की योजनाओं के लिए स्वीकृत 8,000 लाख रु. रखे गए थे। पाँच वर्षों में सिर्फ 1,086 लाख रु. ही खर्च हुए।
5. परिवहन विभाग की 'इलेक्ट्रिक ट्रॉली बसों सहित परिवहन के वैकल्पिक माध्यमों के विकास' की योजनाओं के लिए नौवीं पंचवर्षीय योजना में 2,500 लाख रु. स्वीकृत किये गए थे। पर नौवीं पंचवर्षीय योजना में हुए खर्च के बारे में कोई ब्यौरा नहीं दिया गया। दसवीं

पंचवर्षीय योजना के लिए 28,200 लाख रु. का खर्च स्वीकृत किया गया है।

6. दिल्ली नगर निगम की 'निरीक्षण कर्मियों का सशक्तीकरण' योजना के लिए 100 लाख रु. के खर्च का प्रावधान था, जबकि खर्च 5,476 लाख रु. हुए।
7. शिक्षा विभाग के '14-17 वर्ष की उम्र समूह में अतिरिक्त स्कूलिंग सुविधा के प्रावधान' के लिए निर्धारित 14,100 लाख रु. की जगह सिर्फ 1,737 लाख रु. ही खर्च हो पाए।
8. पर्यटन विभाग के लिए कुल 3,200 लाख रु. का खर्च स्वीकृत किया गया था, जबकि सिर्फ 789 लाख रु. ही खर्च हुए। दसवीं पंचवर्षीय योजना के लिए 6,000 लाख रु. का खर्च स्वीकृत हुआ है।
9. पुरातत्व विभाग की 'दिल्ली नगर संग्रहालय स्थापित करने की योजना' के लिए 1,325 लाख रु. का खर्च स्वीकार किया गया था, जबकि वास्तविक खर्च सिर्फ 46 लाख रु. ही हुए।
10. दिल्ली नगर निगम की 'विज्ञान शिक्षण के सुधार' की योजना के लिए 150 लाख रु. का खर्च स्वीकार किया गया था, जबकि वास्तव में उसमें 6,849 लाख रु. का खर्च वहन किया गया।

शोध- गौरव तिवारी

15. शब्दावली

अधिशेष	Surplus
अपकृत्य प्रणाली	Tort System
आयुर्विज्ञान	Medical Science
एपीएल (गरीबी रेखा के ऊपर)	APL (Above the Poverty Line)
औषधि नियंत्रण बोर्ड	Drug Control Department
खल्ली/खड़िया	Chalk
खाद्य अपमिश्रण निवारण विभाग	Prevention of Food Adulteration Department
खाद्य और नागरिक आपूर्ति विभाग	Department of Food & Civil Supply
खाद्य पर्चा	Food Voucher
जैव चिकित्सकीय कचरा	Biomedical Waste
झोला छाप चिकित्सक	Quakes / Unqualified Doctor
टोटा	Shortage
दिल्ली कृषि विपणन बोर्ड	Delhi Agricultural and Marketing Board
दिल्ली चिकित्सा परिषद	Delhi Medical Council
दिल्ली वित्तीय निगम	Delhi Financial Corporation
नियंत्रक और महालेखा परीक्षक	Comptroller and Auditor General
निविदा	Tender
निस्तारण	Disposal
पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन योजना	Environmental Impact Assessment Plan

पर्यावरणीय प्रबंधन योजना	Environmental Management Plan
प्रावधान	Provision
बीपीएल (गरीबी रेखा के नीचे)	BPL (Below the Poverty Line)
माप एवं तौल विभाग	Department of Weights & Measures
लवणीयता	Salinity
शिक्षा पर्चा	Education Voucher
शेष	Balance
शोधार्थी	Researcher
श्यामपट्ट	Black board
साझा अपशिष्ट प्रसंस्करण संयंत्र	Common Effluent Treatment Plant
समाज कल्याण विभाग	Department of Social Welfare
सरकारी खरीद	Government Procurement
स्वीकृति निर्णय पत्र	Consent Decree

सेंटर फॉर सिविल सोसाइटी

सेंटर फॉर सिविल सोसाइटी सीमित सरकार, कानून का शासन और प्रतिस्पर्धी बाजार के संदर्भ में सार्वजनिक नीतियों पर चिंतन करने वाला एक वैचारिक संगठन है।

के–36, हौज खास एनक्लेव,
नई दिल्ली 110016.
दूरभाष: 26537456, 26521882, फैक्स: 26512347
ई–मेल: ccs@ccsindia.org वेब: www.ccsindia.org